※ टीकाकार के श्री गुरुदेव जी ※

श्री श्री १०८ श्रीसियाशरण जी (श्रीमधुकरजी)
महाराज

श्री चारुशीला मन्दिर, श्री चारुशीला बाग

श्री जानकीघाट, श्री अयोध्या जी

श्रीग्रन्थकार जी के आदि गुरुदेव श्रीसीताराम उपासना रसिकाचार्य

श्री श्री १००८ श्री रामचरण दास जी
(श्रीकरुणासिन्धुजी) महाराज

श्रीजानकी घाट-बड़ास्थान, श्री अयोध्या जी

विषय सूची

श्रीपार्वती पंच संस्कार महाविष्णु महाशम्भु जीका, श्रीसीता। म स्तुति, देवेताओंका पंच संस्कार, श्री युगल मन्त्र परम्परा, पंचमुद्रा स्तुति प्रथम स्सर्ग स्माप्तः। पृष्ठ २४

श्रीरामस्तुति, ब्रह्म शब्द का अर्थ, श्री सीताराम नाम से सर्गसृष्टि, सब रसों की उत्पत्ति, श्रीअयोध्या का नाम तथा अवध मिथिला एक तत्व, द्वितीय स्सर्ग स्समाप्तः पृष्ठ ३५ ॥

पंचविधिजीव, त्रैपादस्थ भगवत धाम, तृतीय स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ५४ ॥

आनुषङ्गिक मुक्ति, त्रैपादस्थ समद्वीप, अयोध्या मिथिला, सर्वलोक स्वामी श्रीराम, चतुर्थस्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ५८ ॥

वाणवती नगर के राजा विष्णुभक्त कन्याओं से विवाह ॥ पञ्चम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ७८ ॥

नन्दन नगरी के राजा योगधीर की कन्या सुकान्ती तथा योगमुद्रा सम्वाद। षष्टतम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ८८ ॥

श्री अवधेश राजपत्नी तथा पुत्रों का व वर्णन सप्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ६५ ॥

तथा अष्टम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ६६ ॥

श्रीदशरथ राजमन्त्री सेवक तथा श्री कौशल्या जी के व श्रीसुमित्रा जी श्रीकेकैई जी के सेवक तथा महाराज के आन्तरिक सेवक ॥ नवमस्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ११३ ॥

श्री दशरथराज सम्बन्धी वर्ग, श्रीजनकराज सम्बन्धी वर्ग, दशमस्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ १२३॥

श्रीमिथिलेश जी के सेवक गण, एकादशस्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ १३३ ॥

श्री अयोध्या सप्तावर्ण परकोटाओं के मध्य सप्तावर्ण खाई। तथा मध्य में अष्टावरण अयोध्या शहर ॥ द्वादश स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ १३६ ॥

शहरकी वर्ण व्यवस्था तथा वैभव ॥ त्रयोदश स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ १३६ ॥

द्वीपान्तरीय दिशान्तरीय राजाओं की श्रीराम भक्ति ॥ चतुर्दश स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ १४१ ॥

श्रीदशरथराजदुर्ग वैभव अष्ट मन्त्री उपरोहितादि निवाश। पञ्चदश स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ १४५ ॥

राजमहल सप्तावर्ण चतुर्दिशाभेदसों वैभव तथा राजरानी निवास। षोडशस्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ १५१ ॥

श्रीअम्बाजी के रनिवाश के आसपास सात सौ रानियोंका निवास तथा वैभव व राजकुमारों की पितृभक्ति॥ सप्तदश स्सर्ग स्समाप्तः॥पृष्ठ १५७॥

श्रीदशरथराज भ्राताओं का निवाश तथा सौराजिक बन के पच्छिम श्रोत्रसाख बन में मुनियों का निवाश तथा चित्रक बन में सत्रुघ्न जी का निवाश। अष्टादश स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ १७० ॥

चित्रघन बन में श्री भरत जी का सप्तावरण महल एकोनविंश स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ १७६ ॥

अब चित्रसाख बन में श्री लक्ष्मण जी का महल विंशति तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥

श्री लक्ष्मण महल वैभव वर्णन, एकविंश स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ १८५ ॥

अब शृँगारक बन का वर्णन, द्वात्रिंश स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ १६० ॥

स्वस्तिकादि महलों के नामपर अर्थ बिचार, श्री सीता जी के मुख्य अष्ट सखियों के निवाश, त्रयोविंश स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ १६८ ॥

हिंडोलादि अष्ट कुंज तथा १४ आवरण श्री कनकमहल का रूप व वैभव वर्णन चतुर्विंशति स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २११

श्रीसीताराम अष्टयाम सेवा में प्रात उत्थापन। पञ्च विंशति स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २१४

मंगला आर्ति सेवा षड् विंश स्सर्ग स्समाप्तः पृष्ठ २१७ ॥

दन्तधावनादि मंगलभोग सेवा सप्तविंश स्सर्ग स्माप्तः ॥ पृष्ठ २२०

श्रान कुंज सेवा, अष्टविंश स्सर्ग स्समाप्तः। पृष्ठ २२३।

कलेऊ कुंज सेवा, एकोनत्रिंशत्तम स्सर्गः स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २२५

शृँगारकुंज की सैवा. त्रिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २२६

सभा कुंज का वर्णन, एकत्रिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २३२

भोजन कुंज सेवा बर्णन, द्वित्रिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २३६

मध्यान्ह शैनकुंज सेवा बर्णन, त्रयस्त्रिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २३८

मध्यान्होत्तर उत्थापन गृष्म अनुकूल कुंज-बनों का विहार बर्णन। चतुस्त्रिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २४३

ग्रीष्मरितु का विहार पञ्चत्रिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २४८

रात्री का शयन सेवा षट्त्रिंशत्तम स्सर्ग स्माप्तः ॥ पृष्ठ २५१

वरुण कन्याओं का रास सप्त त्रिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २५६

रास में मानलील विहार अष्ट त्रिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्त ॥ पृष्ठ २५६

रास में जलविहार बरुण कन्याओं से व्याह एकोनचत्वारिंशतम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २६५

श्रीरामसखाओं का वर्णन चत्वारिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २७१

श्रीअयोध्या जी के बाहरी भाग का वर्णन एक चत्वारिंशत्तम स्सर्ग स्माप्तः ॥ पृष्ठ २७६

चारों दिशाहाटों का वैभव वर्णन द्विचत्वारिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २८०

हाट के व्यापारियों का आगमन तथा श्री अवधेशजी की फौज सजावट। त्रिचत्वारिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ २८७

श्रीराम जी सखाओं के साथ हाट देखने को चले। चतुश्चत्वारिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्त ॥ पृष्ठ २९७ ॥

हाट के व्यापारियों का श्रीराम दर्शन तथा माता श्री कौशल्या जो अपनी पतोहुओं के साथ हाट देखने गई। बाजार में नट का खेल तथा माता जी की वैश्य स्त्रियों द्वारा पूजा, श्री राम जी का परिवार सहित भक्त वैश्य से पूजा। पञ्चचत्वारिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ३१३

श्री युगल सरकार का रात्रि शयन तक अष्टयाम पूरा हुआ। षड्चत्वारिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ३१७

श्रीसुकान्ती का स्तुति करके बेहोश होना, श्री योगधीर जी का पूर्व जन्म चरित्र, सप्त चत्वारिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ३३०

श्रीसुकान्ती के विवाह की तैयारी, श्री राम जी की बरात का इन्तजाम। अष्ट चत्वारिंशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ३३६

बरात की सजावट करके नन्दन नगरी पहुँच कर योगधीर कन्या से विवाह। एकोनपञ्चशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ३५२

सैकल देश के राजा सुयोधन तथा आपके भाई धवलाक्ष की कन्याओं का विवाह, तथा कज्जल देश के राजा श्री तीव्रौज जी की सूर्य कन्याओं से विवाह ॥ एकपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ३५५

सैकल देश के राजा देवौज तथा आपके भाई सुबली जी के द्वारा चन्द्र कन्याओं से विवाह के लिये बरात की अद्भुत सजावट। द्विपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ३७६

बरात को रास्ते में गुप्त चरित्र दीख पड़ा पितृ-लोक का दर्शन। द्विपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४०१ ॥

रास्ते में बरात के चलने की धूम धाम। चतु-ष्पञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४०६

श्री देवौज जी का कन्या विवाहार्थ इन्तजाम। पञ्चपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४२६॥

बरात का स्वागत तथा कन्याओं का विवाह। षडपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४५२॥

विवाह के बाद उपकार्य भोजनादि दहेज विधि। सप्तपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४६२ ॥

श्री अयोध्या में दुलहा दुलहिन सहित बरात का स्वागत। अष्टपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४६६ ॥

श्रीचन्द्र कन्याओं द्वारा स्तुति। एकोन षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४८२ ॥

कन्या विवाहार्थ बहुत से राजाओं द्वारा भेजे गये दूतों का श्रीअयोध्या दर्शन व प्रार्थना स्वीकृति प्राप्त करना। षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४६१॥

माणवक नगरीके राजा उद्धविक्रमकी कन्याओं से विवाह। एकषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ५०३॥

श्री गोपों के राजा की प्रार्थना द्वारा बहुत सी सखियों सहित गोपराज कन्या का विवाह तथा गन्धर्वराज व नागराज की कन्याओं से विवाह। द्विषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ५१६ ॥

मालवक देश के राजा श्री चन्द्रमौली जी की कन्याओं से विवाह, तथा आपके मन्त्रि श्रीसुरप्रभ जी की भी प्रार्थना स्वीकार करके कन्याओं को श्रीरामजी स्वीकार किये। फिर पश्चिमदेशीय और भी बहुत से राजाओंकी प्रार्थना भी स्वीकार किये।

॥ इति शुभम् ॥

❀ श्री अमर रामायण ❀

(श्रीराम रत्न मञ्जूषा)

❀ बन्दना ❀

जै जै सीताराम जी सबके कारण एक ॥
अद्भुत धाम चरित्र युत निरखत सन्त विवेक ॥१॥
रूप सींव रस सींव दोउ निर्गुण सगुण अपार ॥
रास रंग रस सिन्धु में राम नाम सुख सार ॥२॥
जै मिथिलाधिप नन्दनी जै अवधेश किशोर ॥
जैति चारुशीला अली सकल सखिन शिर मौर ॥३॥
जै जै जै हनुमान श्री श्रीप्रसाद अवतार ॥
चारुशिला सर्वेश्वरी तीन रूप निजधार ॥४॥
जै श्री शुभगा 'भरत' तन सेवा समय सुधार ॥
महाविष्णु अवतार महि 'सनक' 'सुशीला' चार ॥५॥
जै विमला अरु 'लछिमना' लक्ष्मण रूपहु धार ॥
नारायण, पुनि शेष तन सेवा समय विचार ॥६॥
जै हेमा 'श्री' रिपुदमन, तीन रूप सुख सार ॥
दम्पति सेवा सुरुख लखि 'भौमा' सुक मुनि धार ॥७॥
सूर्य अंश सुग्रीव 'शिव' शंकर्षण, अवतार ॥
जय अतिशीला प्यारि प्रिय सु वरारोहा धार ॥८॥
जयति बिभीषण 'भीषणा' विश्व मोहनी शक्ति ॥
पद्म सुगन्धा लाड़िली लाल प्रिया वर भक्ति ॥९॥
भू शक्ती भूधरण की सुलोचना सिय प्यारि ॥
जयति जृम्भणा हरि प्रिया जाम्बवान तनुधारि ॥१०॥
जयति क्षमावति क्षेमदा 'क्षेमा' क्षमावतार ॥
अंगद विद्या वारिधर 'बागीशा' वर चार ॥११॥
पार्षदाष्ट सिय राम के रसिकन हिय सुख सार ॥
वन्दौं सबके पद कमल दिव्य दृष्टि दातार ॥१२॥

—:❀:—

* श्री अमर रामायण टीकाकार व प्रकाशकः *

जानकीशरण मधुकरिया

श्रीचारुशीला मन्दिर, श्रीजानकीघाट

श्री अयोध्या जी

इधर सखियों ने अतिशय अनुराग पूर्वल श्रीराम जी और लक्ष्मण जी को सुवासिनियों के मधुर गान हास विलास पूवक तथा २२॥

कृत्वाह्यन्योपचारन्तु लोक रीत्यापि सुव्रतम् ॥
दिव्यं च षड्रसैः पूर्वं कारयामासु रादतेः ॥२३॥

इसी प्रकार सुन्दर व्रत वाले श्रीरामजी को समस्त लोक रीति अन्य उपचारों के सहित बड़े आदर पूर्वक षटरस दिव्य भोजनों को करा रही है ॥२३॥

पृच्छन्त्योपि हँसन्त्योपि कथयन्त्य स्तु पृच्छया ॥
भोजनं विञ्जनायांच नामानि च परिस्कृताम् ॥२४॥

कोई व्यजनों के विविध नामों को पूछती हुई तथा और भी रहस्यों की बातों को पूछती हुई और कुछ कहती हुई भी हँस रही हैं। श्रीरामजी को चारों तरफ घेर कर विनोद कर रही हैं ॥२४॥

प्रीत्या दत्वा च ताम्बूलं गृहे दीपालि भूषिते ॥
स्वापितो नर्मशय्यायां सखिभी र्राघवो मुदा ॥२५॥

इस प्रकार भोजन कराने के बाद दीपावलियों से भूषित महलों में ले जाकर बड़े प्रेम से पान पवाती हैं। नर्म शय्याओं में सखियों ने आनन्द पूर्वक श्रीरघुनाथजी दोनों भाइयोंको शयन कराया ॥२५॥

वशिष्टोपि सुमन्तश्च तथा सख्य जनैः सह ॥
ययौ तत्र निवासं च लब्ध्वा ताम्बूल दक्षिणाम् ॥२६

इधर श्रीवसिष्ठ जी सुमन्त्र जी आदि असंख्य बराती जन भोजन के बड़े आदर पूर्वक पान दक्षिणा को प्राप्त करके जनवांसे में अपने २ स्थानों पर चले गये ॥२६॥

श्रमितानां विश्रामार्थं न चैवोत्सव कार्य्यकम् ॥
विवाहस्योत्तर दिने कृतं राज्ञा विवेकिना ।२७।

इसके बाद बड़े विवेकी महाराज श्रीदेवौज जी ने बराती और घरातियों को श्रमित जान करके विवाह के दूसरे दिन का जो उत्सव कार्य था उसको उस दिन नहीं किया ॥२७॥

ततश्चान्य दिने देवि पौरास्त्रीपुरुषाश्चये ॥
उपयनोत्सव स्तेषां वभूव महती सभा ॥२८॥

उसके तीसरे दिन नन्दिका नगरी के जितने उत्तम स्त्री पुरुष थे वे सब अपने २ हाथों में उपा-भेटों को लेकर के महाराज देवौज जी के घर में आये। बहुत बड़ी सभा हुई ॥२८॥

साजयित्वा समाजेन आगत्य नृप मन्दिरम् ॥
दृष्ट्वा वरं वधूभिश्च तरुण्यो मण्डपायने २६॥

सभी लोग अपने समाजों से सज करके राज महल में आये। तरुणी स्त्रियों ने विवाह मण्डप के अन्दर वर वधुओं को देखा ॥२६॥

वृद्धा अपि कुमार्य्यश्च धृत्वा त्वग्रे यथोचितम् ॥
उपायनं भूषणादि नाना वस्तु मयं शुभम् ॥३०॥

बुड्ढी और कुमारी समस्त स्त्रियों ने अपनी २ उपायन भेंट उचित विधान पूर्वक नान प्रकार के भूषण आदि मांगलिक बहुत सी वस्तुओं को वर दुलहिन के आगे रक्खा ॥३०॥

पुनर्नीराजनं कृत्वा दृष्ट्यापचारणाय च ॥
क्षिपन्ति वस्त्र मुक्तादि परिभ्राम्य विचक्षणाः ॥३१॥

उसके बाद आरती की दृष्टि दोष निवारण के लिए वस्त्र भूषण मुक्ता रत्न वरदुलिहनके चारों तरफ घुमा करके बाहर दिशाओं में बरषा दिया। इस प्रकार बड़ी सूक्ष्म बुद्धि वाली समस्त स्त्रियोंने ॥३१॥

निरीक्षंतीन्दुवदनं श्रीरामस्या निवारिताः ॥
दीनोति च धनं लब्ध्वा बहुल मोदते यथा ॥३२॥

श्रीरामजी के चन्द्रमा सदृश सुन्दर मुखचन्द्र को बिना रोक टोक के खूब दर्शन किया। जिस प्रकार किसी दरिद्री को बहुत सा धन प्राप्त होने पर प्रसन्नता होती है उसी प्रकार सब खुशी होगयी ॥३२॥

तदुत्तरे तुदिवसे राजानो ये निमंत्रणे ॥
देवौजसो गृहेऽनन्ता आगता महता दरैः ॥३३॥

उसके दूसरे दिन निमन्त्रित हुये जितने भी राजा लोग थे वे अनन्त संख्या में सभी राजा लोग महान आदर पूर्वक महाराज देवौज जी के घर में आये ॥३३॥

सभा तेषां बभूवाथ वशिष्ठेन समन्विता ॥
सुमन्तस्य समीपं हि तत्रायं निर्णयोभवत् ।३४॥

उन सब राजाओं के बीच में श्रीवसिष्ठ जी सुमन्त्र जी आदि समस्त बरातियों के सहित एक बहुत बड़ी सभा हुई जिसमें यह निर्णय हुआ कि ॥३४॥

येषां येषां गृहे राज्ञां कन्यास्तु समयोचिताः ॥
विवाहाय चतैः सर्वैस्तौ बिनीय परं यशौ ॥३५॥

जिन २ राजाओं की कन्यायें जिन २ राजाओं के घर में इस समय के योग्य बिवाहने लायक हैं उन सबने परम यशस्वी महाराज बसिष्ठ जो और सुमन्त्र जी से श्रीरामजी के साथ बिवाह के लिये विनय की ॥३५॥

श्रीवशिष्ठ सुमन्तौ चा वनम्य च पुनः पुनः ॥
सम्बन्धं योजयामासु र्दत्तं राम करे फलम् ॥३६॥

श्रीबसिष्ठ जी और सुमन्त्र जी को बार २ नम्रता पूर्वक प्रार्थना करके श्रीरामजी के हाथ में फल देकर के राजाओं ने अपने २ साथ सम्बन्धों को जोड़ा ॥३६॥

ततश्चाप्युत्तर दिने सभाजाता महत्तरा ॥
पुत्रीणां तु सुदाये च देयं यद्वस्तुसर्व कं ॥३७॥

उसके दूसरे दिन फिर एक बहुत बड़ी सभा हुई जिसमें अपने सुन्दर दामाद के लिये तथा कन्याओं के लिए जो २ उत्तम २ समस्त बस्तु देने योग्य थीं ॥३७॥

भूषयित्वा दीप्तिमन्तं ततः स्थानाद्वहिः कृतम् ॥
सहस्रं तु भूषितानां काञ्चने श्च विमानकैः ॥
चलद्गिर्युपमानाञ्च सुलक्षणव्रता मपि ॥३८॥

उनको सुन्दर प्रकाशमान भूषणों से भूषित करके महाराज देवौज जी ने अपने स्थान से बाहर किया जिन समस्त वस्तुओं में हजारों की संख्या में तो स्वर्ण के विमान हैं जो पर्वतों के सदृश चलते हुए सुन्दर लक्षण युक्त उत्तम भूषणों से भूषित हैं ॥३८॥

स्यन्दनानां सहस्रं च हयैर्युक्त मनुत्तमैः ॥
उत्तमा सर्वदेशीया हयास्तैस्त्रि गुणी कृताः ॥३९॥

इसी प्रकार हजारों रथ हैं जो अनुत्तम घोड़ाओं से युक्त है । इसी प्रकार तीन हजार की संख्या में सब देश के सब जाति के उत्तम घोड़े हैं जो गुणियों द्वारा सुन्दर पढ़ाये हुये हैं ॥३९॥

उपायनानि भूषितानि ह्युत्तमै र्वाहकैः सह ॥
सौवर्ण रौप्य पत्राणां भाराद्वे विंशती तथा ॥४०॥

और भी बहुत से उपायन भेंट उत्तम भूषणों से भूषित वाहकों के सहित स्वर्ण चांदी के पात्र चालीस भार तथा और भी ॥४०॥

वस्त्राणां वहु विधानां चित्रताश्च मनोहराः ॥
मञ्जूषा विंशतिश्चैव भूषणानां च तन्मिताः ॥४१॥

बहुत प्रकार के चित्र विचित्र मनोहर वस्त्रों के बीस मंजूसा [सन्दूक] तथा बीस भूषणों के मंजूषा दिये ॥४१॥

पीठान्यास्तर पर्य्यङ्का क्रीड नाष्टापदादिकम् ।
सपञ्जराः पाठिताश्च पक्षिणोपि शुकादयः ॥४२॥

सिंहासन, बिस्तर पर्यंक, चौपड़ादि खेल की सामग्रियां, सुक आदिक बहुत से पढ़ाये हुये पक्षी पिंजराओं के सहित ॥४२॥

गावोपि महिष्यश्चैव पयोदा वहुसस्तथा ॥
सवत्सावसना भषा स्वर्ण रौप्य सुश्रृङ्गकाः ॥४३॥

तथा गौ, भैंस भी बछड़ाओं के साथ खुब दूध देने वाले, बस्त्र तथा रत्न रचित भूषणों से रचे स्वर्ण मढ़े सींग वाले ॥४३॥

वृषभाः सित वर्णाश्च भार वाहास्तथा परे ॥
उष्ट्रानश्वा अपि पुष्ठा विस्तादि भार संयुताः ॥४४॥

इसी प्रकार सफेद रंग के बैल तथा और भी बोझा ढोने वाले मजबूत ऊँट घोड़े खच्चर आदिक जो स्वर्ण रत्नादिक दहेज की सामग्री बोझाओंके सहित हैं॥४४॥

सुवस्त्रा भूषिताङ्गाश्च सेवने कुशला स्तथा ।

दासा दास्यः सुवदनाः सहस्रद्वय सन्मिताः ॥४५॥

इसी प्रकार सुन्दर वस्त्र भूषणों से सजे हुये अङ्ग वाले सेवा में बड़े कुशल मीठा बोलने वाले दो हजार की संख्या में दास दासियां भी ॥४५॥

अपरे गुणिनो ये च कौतुकेन मुदंकराः ।

पुनश्च देशकालज्ञा एवं वहुजना अपि ।४६॥

और भी जो बड़े २ गुणवान कौतुकी आनन्द को बढ़ाने वाले गाने बजाने वाले देशकाल को समझाने वाले इस प्रकार के बहुत से जन भी दिये गये ॥४६॥

भार युक्ता स्तु शकटाः पुष्टैश्च वृषभैयु ताः ॥

गंत्र्योपि वहुशश्चैव वसनैः संवृता शुभैः ॥४७॥

बोझाओं से लदा हुई बैलगाड़ी तथा जिनमें पुष्ट मजबूत बैल लगे हुए हैं सुन्दर बस्त्रों से सजे हुये व्यवाहिक शुभ चिन्हों से युक्त इस प्रकार के बहुत से बैलों के रथ ॥४७॥

वस्त्रा गाराणि वहुशो गुणितानि सुचित्रितैः ॥

ध्वज दीपायनै श्चैव युक्तानि सेवितै स्तथा ॥४८॥

बहुत से बस्त्रों के महल जो सुन्दर चित्रों से बने हुये बाँधने की डोरियां भी जिनमें लगी हुई हैं तथा दीपों की ध्वजायें और भी दीप वृक्षादिक उनकी रक्षा करनेवाले सेवकोंके सहित सब दिये गये ॥४८॥

प्रतिकन्यं विधिनैवं सुदाये दत्तवान्नृपः ॥

वद्धांजलिः पुनश्चासौ सूच यत्यात्मलाघवम् ॥४९॥

इस प्रकार की समस्त विविध सामग्रियों को प्रत्येक कन्या के लिये और सुन्दर दामाद के लिए महाराज श्री देवौज जीने दहेज दिया फिर अपनी आत्मलघुता सूचक हाथ जोड़ करके प्रार्थना भी की॥४९॥

सुरौजोवाच-अवश्यं पूजकैः पूज्यादानमानाभिवन्दनैः ॥

पूजितव्यास्तत्र शक्तिर शक्तिर्निर्णयोप्यसौ ॥५०॥

महाराज देवौज जी बोले कि हे महाराज ! दान, मान, बन्दनादिकों से पूजा करने वाले लोग आपकी अवश्य पूजा करें परन्तु उस पूजा के अन्दर कौन पूजा में समथ है । कौन पूजा में नहीं समर्थ है इस बात का निर्णय यही है कि ॥५०॥

शक्तौ सौवर्ण रत्नानि ह्यशक्तौ तत्र तादृशे ॥

पुष्पाणि मृण्मयान्येवंतन्मे हीनस्य स्वीकुरु ॥५१॥

जो सामर्थ्यमान हो वह स्वर्ण रत्नों के पुष्पों को चढ़ावे ,जो न समर्थ हो वह उसी प्रकार के पुष्पों से पूजा कर ले परन्तु मैं तो ,उन पुष्प चढ़ाने वालों में भी हीन हूँ आप मेरी सेवा को स्वीकार करें ॥५१॥

दीयमानं वस्तु यस्य सुतानां तु सुदायके ॥

हस्त्यश्व स्यन्दनाद्यं चविस्तृतं योजन द्वये ॥५२॥

तस्यैवं कृपणां चोक्तिं वशिष्ठो नीतिवेदवित् ॥
श्रुत्वा तथा सुमन्तोपि हर्षं तु परमं ययौ ॥५३॥

जो अपनी कन्याओं के लिए और सुन्दर दामाद के लिये दो योजन के बिस्तार में हाथी घोड़ा रथ पालकी बिस्तार फैलाये हुये इतना दान दे रहे हैं इनके इस प्रकार कृपणता पूर्वक वाणी को सुनकर नीति और वेद केविद्वान श्रीवसिष्ठ जी तथा सुमन्त जी भी परम हर्ष को प्राप्त हुए ॥५२-५३॥

कृतज्ञो नीति मद्राजन्कथं नो वदसीति च ॥
ब्रुवंस्तं शंशयामास तथैव च सभाजनाः ॥५४॥

हे राजन् आप दूसरे के उपकार को मानने वाले इस प्रकार की नीति को प्रगट करने वाली वाणी किस लिए हम लोगों से इस प्रकार बोल रहे हैं? इस प्रकार श्रीवसिष्ठ जी के कहते हुए सभी सभा-जन भी इसी प्रकार कहने लगे ॥५४॥

पुनः प्रसन्न मनसा दिव्य भूषण वस्त्रकैः ॥
वशिष्ठं तु पृथक् पूज्य विनीय वहुशस्तथा ॥५५॥

इसके बाद प्रसन्न मन होकर के श्रीवसिष्ठजी को भी दिव्य वस्त्र भूषणों से बहुत प्रकारसे अलगर पूजा की ॥५५॥

अयोध्या वासिनः सभ्या मध्यमा लघवयोऽपि ये ॥
तत्पक्षका नृपाश्चैव तेषां चैवानुगामिनः ॥५६॥

इसके बाद सभी अयोध्या वासी सभ्य मध्यम तथा साधारण बाल वुड्ढे भी और बरातके पक्ष वाले सभी राजाओं तथा उनके अनुगामियों को भी ॥५६॥

वादित्र वाद काश्चान्ये वाहनानां च सेवकाः ॥
मुख्या मुख्य प्रभेदेन तथा सर्वेऽपि याचकाः ॥५७॥

तथा गाने बजाने वाले केवल बाजा बजाने वाले और सवारियों के सेवक जितने भी मुख्य तथा अमुख्य भेद से तथा और याचक जन ॥५७॥

यथा योग्या दरै दानै र्योग्ये पादाभि वन्दनैः ॥
प्रतोषिताः समन्ताच्च राज्ञादेवौजसा तदा ॥५८॥

यथा योग्य आदर दानमानसे और यथा योग्य पादाभिवन्दनादि से महाराज श्रीदेवौज जी ने उस समय चारों तरफ से सन्तुष्ट किया ॥५८॥

सुयशोपि परं लेभे कृत्येन महतापि च ॥
दृष्ट्वा श्रीरामरूपं च वभूव विगत श्रमः ॥५९॥

इस प्रकार के कृत्य से महान सुन्दर परम यश को भी प्राप्त करके और श्रीराम जी के रूप को देख करके महान परिश्रम से निवृत्त होगये ॥५९॥

श्वश्रुरुवाच-को जानाती दूरत्वाद्दुर्लभं दर्शनं त्वतः ॥
श्रीरामोवाच-संदेह खलु मायासिमात मां प्रतिसर्वथा ॥६०

सासु बोली कि हे राम ! बहुत दूर होने की वजह से आपका इस प्रकार दर्शन फिर होगा ऐसा कौन जानता है ? श्रीरामजी बोले कि हे माता ! आप मेरे प्रति सर्वथा इस प्रकार का सन्देह को क्यों प्राप्त हो रही हैं ? ॥६०॥

सुदूर श्रपि निकटो सम्बन्धो यत्र चात्मनः ॥
निकटोपि सुदूरः स्यात्सम्बन्धा भावतः स्वतः ॥६१॥

जहां आत्मा का सम्बन्ध हो जाता है यहां दूर होने पर भी निकट ही रहता है और जहां संबंध का अभाव वहां नजदीक में होने पर स्वाभाविक ही दूर है ॥६१॥

किं परं दूर संस्था नौ प्रीय माणौ परस्परौ ॥
महात्माना वब्धि चन्द्रौ वियोगे व्यथते किल ॥६२॥

परस्पर प्रेममयी व्यवहार होने से क्या दूर क्या नजदी वह तो समीप ही है जैसे महात्मा समुद्र और चन्द्रमा अपनी स्नेह भावना से क्या तो वियोग से व्यथित होते हैं ? ॥६२॥

राज्ञीनां हृदि राज्ञश्च वियोगो वर्द्धते किल ॥
सुवाग्मी रामचन्द्रस्य यथा ह्यद्भि र्नवांकुरः ॥६३॥

इस प्रकार राजा रानी के हृदय में अतिशय स्नेह रूप बीज बढ़ती हुई वियोग रूप अग्नि से कबा तो जल रहा था श्रीरामजी की सुन्दर वाणी ने जिस प्रकार जल बीज में नवीन अंकुर पैदा करता है उस प्रकार स्नेह रूप बीज में से नवीन अंकुर पैदा किया ॥६३॥

सुवाग्मि र्बोधितो प्रीत्या श्वसुरौ प्रिय वादिना ॥
श्रवदश्रुमुखौ चाग्रे नहुभि र्राघवेणहि ॥६४॥

इस प्रकार श्रीरामजी ने बड़े प्रेम से अत्यन्त प्रिय वाणी द्वारा दोनों सासु श्वसुरों को प्रबोधित किया दोनों सासु श्वसुर नेत्रों से आँसुओं की धारा बहाते हुए श्रीरामजी के आगे बिराजे हैं ॥६४॥

अथो पदिश्य सद्धर्म्मं नारीणां मातृभिस्तदा ॥
शीलं पातिव्रतं ताभ्योविनीय रघुनन्दनम् ॥६५॥

इसके बाद माताओं ने कन्याओंके लिए नारी धर्म के उद्देश्य से शील पतिव्रतादिक बहुत प्रकार के सत्धर्मों को उपदेश किया जिससे वे सुन्दर रूपवती कन्यायें श्रीरघुनाथ जी में भाव को बढ़ावें ॥६५॥

नियोगिता रूप वत्यः सुतास्ता पटग्रन्थनैः ॥
पौरास्त्री पुरुषा यावद्बान्धवानां स्त्रियोवराः ॥६६॥

इसके बाद उन कन्याओं का वरके साथ पट ग्रन्थि करके अड़ोस पड़ोसकी समस्त स्त्रियें साथ हो करके तथा अन्य पुरुष वन्धु वर्गों के साथ ॥६६॥

समाहूयादरेणैव कृत्वा च सत्समाजकम् ॥
वहुशो वाद्य गानैश्च निवासे तद्वधूवरौ ॥६७॥

बहुत प्रकार के गान बजान पूर्वक वर बधुओं को जन-सुन्दर समाज करके बड़े आदर के साथ वासे में ले गये ॥६७॥

नीतौ देवौजसा राज्ञा वशिष्ठं च सुमन्तकं ॥
नत्वा पुनः पुनस्तेन पूजयित्वा ह्य पायनैः ॥६८॥

इस प्रकार महाराज देवौजजी ने दोनों बर कन्याओं को लाकर के श्रीवसिष्ठ और श्रीसुमन्त्रजी इन दोनों को सन् उपायन भेंट द्वारा पूजन करके बार २ नमस्कार किया ॥६८॥

सभ्यान्सर्वान्प्रणम्याथतैः प्रशंशित सत्कृतः ॥
सुखं वियोग जं दुःखं समं लब्धोन्मना तदा ॥६९॥

और सब बराती सभ्यजनों को प्रणाम किये उन सबने भी आपकी प्रशंसा की। इस प्रकार सम्बन्ध का सुख और वियोग जनित दुख दोनों समान रूप से मन के अन्दर व्याप्त हुए ॥६९॥

अनु व्रज्याति दूरं च प्रजा बन्धु जनैश्च सः ॥
आजगाम गृहं राजा श्रीरामं संस्मरन्नपि ॥७०॥

इसके बाद महाराज अवधेशकुमारके साथ तथा और सभी बन्धु बरातियोंके साथ श्रीअयोध्या जी के लिये चलने लगे। महाराज देवौज जी भी बहुत दूर तक अपने प्रजा बन्धुओं के साथ पहुँचाने के लिये आये फिर श्रीरामजी का स्मरण करते हुये अपने घर को लौट गये ॥७०॥

वधूभिस्तत्क्रमेणैव मार्गं चाक्रम्य राघवः ॥
अयोध्यायां प्रदेशस्य सविधं प्राप्त वान्मुदा ॥७१॥

इधर श्रीरामजी भी वधुओं के साथ तथा सभी बरातियों के साथ पूर्व क्रम के ही अनुसार मार्ग में ठहरते हुये सुन्दर बिधान पूर्वक प्रसन्नता से अपने देश श्रीअयोध्या जी में आगये ॥७१॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां उमा महेश्वर सम्वादे मार्ग क्रम वर्णनो नाम सप्तः पञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५६॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां मार्ग क्रम वर्णनो नाम सप्तः पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तम् ॥५६

व्यतीत कालोद्बहु शोऽत्र पौराद्रष्टुं सरच्चंद्रशत प्रभास्यम्॥
रामस्य वाक् प्रीति विवर्द्ध नस्य नेत्रे र्बभूवुस्तृपिता अतीव॥

इधर श्री अयोध्यावासी बहुत काल बीत जाने से सैकड़ों शरद चन्द्रमाओं के समान प्रकाशमान श्रीमुख चन्द्र वाले और अपनी वाणी से आश्रितों के स्नेह को बढ़ाने वाले नेत्रों से सबकी भूख को तृप्त करने वाले श्रीरामजी के मुखचन्द्र को देखने की प्यास अतिशय बढ़ गयी ॥१॥

पुर प्रदेशान्निकटं त्व वाच्या तमागतं श्रु य वरस्य यानम् ॥
रामस्यते पौर जनाश्च सर्वे चक्रुर्महोत्साह मपूर्व हर्षैः ॥२॥

श्रीरामजी की बरात श्रीअयोध्या नगर के समीप आ पहुँच गयी है इस प्रकार अगवानियों द्वारा समाचार सुन करके सभी अयोध्या नगरवासी लोग अपूर्व हर्ष और महान उत्साह से भर गये ॥२॥

निःसृत्य निःसृत्य स्वकात्सुगेहादावासकक्षामधि गम्य मध्याम् ॥
सुबाहना भूषण भूपिताङ्गा व्यूहैः समूहै रचयन्ति सेनाम् ॥३॥

और अपने २ घरों से निकल २ करके सुन्दर भूषणों से भूषिताङ्ग हुए सुन्दर वाहनों में सवार हो २ करके समाज बद्ध सेना समूह रचना करके श्रीअयोध्या जी की गलियों से बाहर आये ॥३।

आवासका स्तोप सहस्रशश्च ह्युपेत्य तन्मण्डल मध्यकक्ष्याम् ॥
चिन्हैस्तु भिन्ना अपि लक्षमाणाः हयाननन्तुश्च गजान्विचेरुः॥४॥

इस प्रकार श्रीअयोध्या जी की हजारों गलियोंसे सब लोग मण्डल बाँध २ करके अपने २ मण्डल के अलग चिन्हों से चिन्हित अलग २ लक्षणों से सजे हुए समाज वाले अपने मण्डलों के बाहर कक्षाओं में आकर सब मण्डल इकट्ठे हुये प्रत्येक मण्डल घोड़ा और हाथियों को नचाते हुये सुन्दर समाज बाँधे ।।४॥

एवं त्वयोध्यानिवासिनो जना निःसृत्य निःसृत्यनिजाधि मंडलात्॥
द्वारा एयथोलंघ्य पुरस्य शोभना न्यनन्त कक्षया मधिगम्यविस्तृताम्। ५।

इस प्रकार समस्त अयोध्या वासी जन समूह अपने २ मण्डलों से निकल २ करके द्वारों का उल्लंघन किये सम्पूर्ण अयोध्या जी अनन्त कक्षाओं में अतिशय विस्तार पूर्वक शोभायमान सजे हुये।५।

एकत्र भूतास्तु समग्र सेनाः कोलाहलैश्चैव दिगन्त विस्तृतैः ॥
स्थलैक भूता इव लोक नद्य स्त्वपूर्वशोभां परिणत्य रेजुः ॥६॥

सभी मुहल्ला की सब सेना इकट्ठी होकर अपने कोलाहल से दशों दिशाओं को गुञ्जित करते हुए जिस प्रकार समस्त नदियां इकट्ठी हों इस प्रकार अपूर्व शोभा से सजे हुए॥६॥

ततो प्युदग्रं परितः प्रकाशं वादित्र शब्दो घन गर्जनैश्च ॥
कदापि काले प्रसरन्नि वाब्धिः श्रीराम यानाभिमुखं प्रतस्थे ॥७॥

चारों तरफ अतिशय बढ़े हुये प्रकाश से तथा मेघ की तरह महान् गर्जना से प्रलय कालिक समुद्र की बाढ़ सदृश श्रीअयोध्यावासी श्रीरामजी को लिवा लाने के लिए सम्मुख आये ॥७॥

श्रीरामचन्द्रानन विचक्षणेक्षवः प्राप्तेपि सा ये रुरुधुर्गतिं नते ।
प्रमोद युक्ताश्च प्रमोदकाननं विलंघ्यते तं समीयुः सुदूरतः ।८॥

श्रीरामचन्द्र जी के मुखचन्द्र की अतिशय सूक्ष्मबुद्धि से देखने की प्रबल इच्छा वाले श्रीरघुनाथ जी के समीप प्राप्त होने पर भी वियोग के सन्ताप से रुकी है गति जिनकी मिलने की आशा से अत्यन्त बढ़े हुए प्रमोदवन को उल्लंघन करके बहुत दूर तक आये। ८॥

दीपावलीनां परितः प्रकाशतः प्रतीत मे ते रुदयंविभावसोः ॥
वाद्य प्रघोषा त्पुनरेव यानकं केचिच्च केचित्तथापि बभ्रमुः ॥९॥

बरात की दीपावलियों द्वारा चारों तरफ अतिशय प्रकाश की वजह से सबको सूर्य उदय होगए इस प्रकार का अनुभव हुआ और फिर बाजाओं के महान् घोष से और कोई २ बहुत सी सवारियों के देखने से भी भ्रमित होगए॥९॥

ततस्तुकिंचित्सविधं समागते ह्यष्यान्तरं नाग विमान मण्डलम् ॥
समं समंतात्परितः प्रविस्तरं दृष्ट्वा प्रतीतं परमुच्च मन्दिरम् ॥१०

फिर कुछ दूर और आगे चलने पर वस्त्रों के बहुत बड़े२ महलों को देखने से तथा बड़े हाथियों को पीठों पर विमानों के मण्डप को देखने से इसी प्रकार बहुत दूर विस्तार तक चारों तरफ देखने पर तब यह श्री राम जी की ही बरात है ऐसा विश्वास हुआ ॥१०॥

दीपौषधीनां वनमेव केचिदुच्च प्रकाण्ड द्रुम संहतंतत् ॥
एवं वदन्तोपि वितर्कयन्तः पौराः पुरोयान जनैः समं ययुः॥११

और कोई२ ये दीप औषधियोंका वन है जो ऊँचे२ दीप औषधियों के वृक्षोंका समूह उसीका यह वन है इस प्रकार कहते हुए भी अनेक प्रकार की तर्कना करते हुए अयोध्या वासी लोग यह प्रकाश श्री राम जी के बरातियों के पास का है अतः हम लोग आ पहुंच गये हैं ऐसा निश्चय किये ॥११॥

सुवाहना रूढजनाः सहस्रं सन्नद्ध सस्त्राः परितो भ्रमन्ति ॥
बहिर्प्रदेशे सुक दुर्गतश्चतैः प्रज्ञापितं गोपुर माययुस्ते ॥१२॥

हजारों जन सुन्दर सवारियों में बैठे हुए अपने अस्त्र शस्त्रों से कसे हुये बरातियों के निवास के बाहर में वस्त्रों का जो कोट बना है उसके बाहर में चारों तरफ घूम रहे थे उनके द्वारा यह श्रीराम जी की बरात है ऐसा जान फाटकों करके अयोध्यावासी लोग श्रीरामजी के परकोटा फाटक पर आ गये ॥१२॥

तद्रक्षकाश्चापि सहस्रसश्च सतां गुणज्ञा गुणिनश्च सर्वे ॥
तैराद्रितास्ते विविसुश्च पौरा अभ्यन्तरं वस्त्र गृहैः प्रकीर्णम् ॥१३॥

फाटकों की रक्षा करने वाले हजारों सेवकों ने सन्तों की सन्तता गुण को जानने वाले हजारों समस्त गुणियों ने उन सबका सुन्दर आदर किया इस प्रकार सभी लोग अयोध्याबासी बहुत विस्तार में फैले हुए वस्त्रों के घरों में भीतर प्रवेश किये ॥१३॥

पर्यङ्कताधः पदमादधन्नथ श्रुतं सुमन्तेन समागताः प्रजाः ॥
श्रीराम यानाभिमुखावलम्बिनां स्वयं सुमन्तोभि मुखं जगाम स ॥१४

इधर श्रीसुमन्त्र जी अपने पलँग से नीचे पैर रखते हुए उसी समय सुना कि सब अयोध्यावासी प्रजाजन हम लोगों के स्वागत के लिये आये हुये हैं ये श्रीराम जी की बरात के सन्मुख आये हुए हैं ऐसा जानकर श्री सुमन्त्र जी भी उनके सन्मुख आए ॥१४॥

प्रजा समालोक्य सुमन्त मग्रतः प्रसन्नपूर्णेन्दु मुखं स्मिताधरम् ॥
अतीव हर्षं प्रययुस्तदाहि ते नृपाद्दतं लोक सुधाधिकं नृणाम् ॥१५

सब प्रजाजनोंने देखा कि श्रीसुमन्त्रजी पूर्णमासी के चन्द्रमाके सदृश प्रसन्नमन मन्द मुसुकयाते हुए आरहे हैं ऐसा देखकर उस समय अतिशय हर्ष को प्राप्त हुए क्योंकि ये श्रीसुमन्त्र जी महाराज श्री चक्रवति दशरथ जी से आदरित हैं और हम सब समस्त लोक के मनुष्योंके लिए अमृत से भो अधिक प्रिय करने वाले हैं ऐसा निश्चय किया ॥१५॥

गिरं महिम्नाति गरीयसीं तदा वाद्यैः समं बोधकरैः समाहिताम् ॥
श्रुत्वा जजागार वरो वरेक्षणः रामोरवेर्वंश यशः प्रवर्द्धकः ॥१६॥

इधर श्रीराम जी पर्वत से भी अधिक वजनदार महिमा वाले बड़ी सावधानता पूर्वक आदर से बजाये गये बाजाओं द्वारा सुन्दर तरह से जगाये गये। सूर्यवंश के यश को बढ़ाने वाले और सुन्दर कटाक्ष वाले दुल्हा वेष में श्रीराम जी भी उन बाजाओं और गीतों को सुनकर जागे ॥१६॥

ततः सुमन्तेन निदेशिताः प्रजास्तद्रूप पानाय पिपासिते क्षणाः ॥
तृप्ति ययुस्तद्वचनै र्मनोहरैस्तद् रूपपानादनिमेष वीक्षणैः ॥१७

उसके बाद श्रीसुमन्त्र जी ने भी श्रीरामजी के रूपरूपी अमृत को पीने की प्यास से सन्तप्त हुए प्रजाजनों को श्रीरामजी के रूपामृत पीने के लिये अर्थात् दर्शन करने की आज्ञा दी। श्रीसुमन्त्र जी के मनोहर वचनों से और अनिमेष नेत्रों से श्रीरामजी के रूपामृत को पान करने से सब लोग तृप्त हुये ॥१७

ततो भिषेकादि क्रिया यथोत्तरं कृत्वा सुमिष्टान्न सुभोजनानि च॥
वासश्च तस्मिन् दिवसे प्रकल्पितः प्रजा जनानां श्रमवारणायवै॥१८

उसके बाद स्नानादिक उत्तर नित्य क्रियाओं के लिये तथा सुन्दर मिष्ट स्वादिष्ट भोजनके लिए और उस दिन सभी प्रजाजन अपने श्रम निवारणार्थ एक दिन वास करें इसके लिए अनेक प्रकार की कल्पना की ॥१८॥

वाद्य प्रघोषै र्गगने विनादिते रथाश्व नागैश्च रजो भिपूरिते ॥
चचाल यानं जनयान संघटैः पुनः प्रभाते वर राघवस्यतत् ॥१६

फिर दूसरे दिन बाजाओं के महान् घोष से तथा रथ घोड़े हाथियों के चरण धूलि के उड़ने से आकाश को भरते हुए सम्पूर्ण जनसमूह और बरातियों के साथ श्रीरामजी की बरात श्री अयोध्या जी के लिये चल पड़ी ॥१६॥

ततश्च साखा नगराधि वासिनो विभूषिताः पुष्कल पुष्ट भूषणैः
नार्य्याः शिरो मङ्गल कुम्भशोभना गायन्त्य एवाभिमुखं समाययुः२०।

इस तरह बरात के श्री अयोध्या जी के समीप में आने पर समस्त अयोध्यावासी साखा वर्ग (नगर के प्रत्येक खण्डों की जनता) विविध प्रकार के भूषणों से भूषित होकर और नगर की स्त्रियायें सिरों पर मांगलिक कलशों को लेकर मांगलिक गीतों को गाते श्रीरामजी के सन्मुख आये ॥२०॥

ताभिः शरच्चन्द्रशत प्रभायुत रामस्य चालोक्य मनोहराननम् ॥
नेत्रै र्निमेषा गतयश्च पादयो र्विश्लेपिता अन्तर मोद वृत्तिभिः॥२१

उन सबने सैकड़ों चन्द्रमाओं के समान प्रकाशमान श्रीरामजी के मनोहर मुखचन्द्र को अनिमेष नेत्रों से देखा, पैर की गति भी रुक गई, अन्तःकरण में आनन्द से विभोरता उत्पन्न हो गयी ॥२१।

वाद्यैश्च साखा नगर प्रजा मुदायामे तु रामस्य जनै समाकुले ।
पादः प्रकीर्णे सरितोयथो दधौ विशन्ति वेगैर्ध्वनिभिश्च शोभनः॥२२॥

नगर से आये हुए जनसमूहों की भीड़में श्रीरामजी के दर्शनानन्द से एक याम में इतनी अधिक भीड़ होगई कि जनता के पाद संचार संघर्ष से और बाजाओं के घोष से और हृदय के उत्साह से जिस तरह नदियां बड़ी वेग से आवाज करती हुई समुद्र में प्रवेश करती हों—इस तरह की शोभा हुई ॥२२॥

इत्थं च साखा नगरस्थकैर्जनैर्दक्षे च वामे च पुरः प्रवर्त्तकैः ॥
पश्चात्तथैवं सुशुभे वरस्य तद्रामस्य यानस्य सुसाज बद्धकैः ॥२३॥

इस प्रकार अयोध्या नगरस्थ आई हुई जनता ने श्रीरामजी के दाए, बाँए, आगे, पीछे सुन्दर समाज बद्ध होकर के बरात में सम्मिलित होकर सुशोभित हुई ॥२३॥

अग्रे सरैरेष सरित्सुवारिणा मध्ये चलद्भिस्तु ततो नु कर्दमैः ॥
पश्चाच्च लद्भिस्तु सुतप्तरेणुभि र्वगाहितं वर्त्मनि पर्वतात्मजे॥२४

हे पर्वत पुत्री ! अब इस तरह से यह बरात चलती हुई पहले नदीके मध्य जलसे पार हुई उसके बाद दल २ से पार हुई उसके बाद तपे हुये बालू से पार हुई । इस प्रकार रास्तेको पार करती हुए ॥२४॥

चचालयानं प्रसरत्समागतै र्रामस्य राजध्वज मुत्पताकवत् ॥
सूत्रे यथा प्रोत मणिस्तथा विधं हित्वा क्रमं कोपि न पाद मादधत् ॥२५॥

श्रीरामजी की बरात राजचिन्हों से चिन्हित ध्वजा पताकाओं से चलती हुई शोभित हो रही है। बरात में चलने वाले लोग ठीक लाइन (पंक्ति) बांधकर चल रहे हैं। जिस तरह से माला में दाने सूत में गुथे रहने की वजह से इधर उधर नहीं हो पाते हैं उसी तरह सबके पैर अपनी पंक्ति से इधर उधर नहीं हो पाते हैं ॥२५॥

शिरः प्रदेशे कलधौत सूत्रकै रुष्णीष रत्नांचित धारिभिर्जनैः ॥
उच्चैर्हयस्थैश्च तथा गजस्थकै र्यानं त्वपूर्वोपमया विराजते ॥२६॥

बराती लोग जो ऊँचे घोड़ा और हाथियों पर तथा रथों में बैठे हुये हैं उनके सिरों में स्वर्ण सूत्रों से बनी हुई कपड़ों की पगड़ी रत्नों से और सिर पेच आदिकों से रचित ऐसी अपूर्व उपमासे प्रकाश कर रही है ॥२६॥

विभात मार्तण्ड शिरोविभूषिताः कलाभिपूर्णा शरदींदवो यथा ॥
तेषां समूहः किमु पूरितावनि र्विभूषिताना मुडुमाल भूषणैः ॥२७॥

और अनेक प्रकार के सिर के भूषणों से भूषित ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे अनन्त सूर्य मण्डल उदय हुए हों । मुखचन्द्र के प्रकाश से ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे अनन्त शरदपूर्ण चन्द्रमा उदय हुये हों और उनके प्रत्येक अङ्गों के भूषणों से ऐसी शोभा होती है कि क्या उनके अङ्ग रूप आकाश में सभी ताराओं का समूह मण्डल उदय हुआ है ? ॥२७॥

वाग्भिः स्व सौन्दर्य्य गुणैर्विनिर्मितार्रति श्रमश्चन्द्र सरच्चमत्कृतिः ॥
उवाह्यतास्तत्र समागतेनवैवरेण कस्यापि महीपतेः सुताः ॥२८॥

दुलहा ने किसी राजा की बहुत सी कन्याओं को विवाहा है वे सब कन्यायें इस बरात में आती हुई अतिशय शोभित होती हैं जिन्होंने अपने शौन्दर्य गुण से शरद पूर्णमासी के चन्द्रमा के चमत्कार को तथा रति को निर्माण करना केवल श्रम मात्र कल्पित कर दिया है ॥२८॥

तन्मङ्गलायोच्च ध्वजोत्पताक वस्तुरत्न कुम्भैः परितोविभूषितम् ॥
आगत्य तत्पौर जनैः स्थिताकुलं वाद्य प्रघोषैः प्रतिशब्द नादितम् ॥२९॥

इन बरातियों के स्वागत के लिए अपनी ध्वजा पताका और रत्नों के कलश आदिकों से चारों तरफ विभूषित श्री अयोध्या नगर के रहने वाली जनता ने अपने मांगलिक बाजा और गीत शब्द नाद से अतिशय कोलाहल मचाते हुए भीड़ लगा रक्खी है ॥२९॥

शिरः समादाय घटान्सुवर्णकान् जवांकुरैर्नव्य जलैः प्रपूरितान् ।

पुरां गणाभिः पुरतः समाश्रितं रामेण दृष्टं स्व पुरस्य गोपुरं ।३०॥

कोई अपने शिरों पर स्वर्ण कलशों को लेकर और कोई जौ के अंकुरों को लेकर ताजे जल से पूर्ण पात्रों को लेकर इस प्रकार नगर की स्त्रियायें नगर के द्वारों पर जहाँ तहाँ खड़ी हैं इस प्रकार अपने नगर के प्रत्येक फाटकों को विशेष रूप से शोभित हुए श्रीरामजी ने देखा ॥३०॥

प्रपूज्यद्वारं बलिदानतस्तदा पुरस्य पौरैरभि वीक्षितो मुदा ॥

वरो विवेशात्म पुरस्य गोपुरं वधू गणैः राजसुता भिरन्वितः ॥३१॥

इस प्रकार नगर द्वार पर बरात के पहुँचने पर नगर वासियों ने बलि वैश्वदेव पूजन पूर्वक आनन्दित हुये श्रीरामजी को देखा। इस प्रकार अपने वधूगण राजकन्याओं के सहित दुल्हा अपने नगर के फाटक भीतर प्रवेश किए ॥३१॥

वध्वश्च बध्वाञ्जलि मात्मनः पतेर्हर्म्योच्च कुम्भैः कनकैः प्रकाशिताम् ॥

ध्वजोत्पताका भिरशेष राजितांपुरीमयोध्यां परितो ववन्दिरे ॥३२॥

दुल्हिनी सब अपनी आत्मा के पति श्रीरामजी के ऊँचे कलश ध्वजा पताकादिकों से प्रकाशमान महान ऊंचे महलों में प्रवेश करते हुए अपने हाथों की अञ्जलि बांध कर सम्यक प्रकार ध्वजा पतादिकों से सुशोभित श्रीअयोध्यापुरी को चारों तरफ से प्रणाम किया ॥३२॥

प्रतोलिकायामुभयत्र काञ्चना प्रासाद राजि र्मणिभि श्चमत्कृताः ॥

तस्या गवाक्षेषु निरीक्ष्य राघवं नार्य्यो ववृषुर्मणि मौक्तिकानि च ॥३३॥

नगर में प्रवेश करते हुए नगर की नारियों ने स्वर्णमयी दोनों तरफ की सुन्दर प्रतौलिका वाले जो महल मणियों से चमत्कार करते हुए प्रकाशमान हो रहे हैं उनके छज्जाओं में खड़ी हुई श्रीराघवजी को देखकर मणि और मुक्ताओं की वर्षा की ॥३३॥

अदर्शनेनाति व्यतीत कालतः प्रजा जनानां तृषितानि सांप्रतम् ॥

रामोपि सौन्दर्य्य सुधाभि रात्मनस्ततर्पनेत्रा न्यनुराग वन्ति च ॥३४॥

अत्यन्त अनुरागवती प्रजा जनता के बहुत काल व्यतीत होगया श्रीरामजी के दर्शन न होने पर इस समय दर्शनके लिये अत्यन्त प्यासी थी श्रीरामजी अत्यन्त अनुरागवती अपनीजनताके अपनी आत्मा के शौन्दर्यमयी अनुराग को दिखाकर नेत्र तृप्त किये ॥३४॥

विवाह माङ्गल्य विभूषिताधिकं वाद्यैः सुगानैः प्रतिशब्द नादितम् ॥

द्वारं पितुः पौरजनै रधिष्ठितं महेन्द्रनाथस्य वरो गमत्तदा ॥३५॥

इस प्रकार सबको प्रसन्न करते विवाहके माङ्गलिक भूषणों से भूषिताङ्ग और बरात के बाजा गान व तान से प्रतिध्वनित दिशाओं के सहित समस्त प्रजा जनता से पूजित होते हुए महेन्द्रनाथ श्रीचक्रवर्ति जी महाराज अपने पिता जी के द्वार पर श्रीरामजी आ पहुँच गये ॥३५॥

द्वारे तदा मातृगणै र्नीराजितः साकं वधूभिर्भवनानन्तरं ययौ ॥
अर्घ प्रदानैश्च महर्घ्ये वाससि दधन्य यौ मातृ गणं समागमात् ॥३६॥

द्वार पर माताओंने सुन्दर आरती, द्वार परीक्षण, अर्घ्य, पाद्यादिक पूजन विधान पूर्वक बधुओं सहित श्रीरामजी को बिसकीमतीय वस्त्रों के पांवड़ाओं में चलते हुये माताओं के महलों में ले गये ॥३६॥

पौराणां च समस्त वृद्ध वयस श्चातुर्वर्ण्या स्त्रियो,
ज्ञातीनां गुणवत्तरां किलतथा रामस्यवै मातरः ॥
ताश्चा लोक्यशशि प्रभं नताद्दशं साध्वींदुजानां मुखं-
तोषं प्राप्यमुदाशिषा सुवचनैः संयोजयंत्यो ययुः॥३७

नगर की चारों वर्ण की वृद्धा उत्तम स्त्रियायें बड़ी गुणवती हैं और श्रीरामजी की मातायें चन्द्रमाके समान प्रकाशमान शीलमयो नम्र दृष्टि वाली चन्द्रपुत्री तथा श्रीरामजीके मुखको देखकर सब उत्तम साध्वी चन्द्रमा के सदृश मुख वाली स्त्रियायें अतिशय सन्तोष को प्राप्त हुई और आनन्द मग्न हुए सुन्दर प्रिय वचनों से श्रीरामजी को आशीर्वादों से संयोजित करके महासुख को प्राप्त हुईं ॥३७॥

विश्लेषितानामथ मातुरंकात्समागतानां श्वसुरस्य गेहम् ॥
निसर्ग मुद्वेजितमानसानां श्वश्रूः समीहेन्मुदये वधूनाम् ॥६८॥

जो बधुयें माताओं की गोदियों से बिछुड़ी हुई हैं और पहले २ श्वसुर के घर में आई हुई हैं जिनका मन अत्यन्त उद्विग्न हो रहा है ऐसी वधुओं को सासुओं ने देखा ॥३८॥

अपूर्व भावं वसनं विभूषणं क्रीडोपचारं विविधं विचित्रकम् ॥
मातुः सखीभिः परिशिक्षिता ददं दृष्ट्वा न लोभं न च विस्मयं दधुः॥३९॥

तब अपनी बधुओं के लिए स्नेह के अपूर्व भाव से विविध प्रकार के वस्त्र और भूषणों को तथा चित्र विचित्र विविध प्रकार के खेलने के उपचारों को बधुओं के लिए दिया और सासुओं ने तथा सखियों ने सुन्दर शिक्षा देते हुए उन सब सामग्रियों को स्वीकार कराया परन्तु उन सब बधुओं ने इन सब सामग्रियों को देखकर न तो लेने का लोभ किया और न कुछ मन में आश्चर्य ही हुआ ॥३९॥

आसां तथावाल लता विशेष रन्यत्र तो न्यत्र विरोपिता नाम् ॥
कृपामृतं केवल जीवनस्या न्नृपात्मजायाः मिथिलेन्द्र पुत्र्याः ॥४०॥

जिस प्रकार कोई लता कहीं से उखाड़ कर दूसरी जगह रोपी जाय उसके लिये रोपने वाले की कृपा ही केवल आधार है उसी प्रकार इन राजकन्याओं के लिए केवल श्रीमिथिलेस राजपुत्री जी की कृपा मृत ही इनके लिए आधार है ॥४०॥

इत्थं जनन्या रघुनन्दनस्य विचार्य्य चैनं परि लालयित्वा ॥
शुभे बधूभि र्भवनाय योगे सं प्रेरितो गान महोत्सवै श्च ॥४१॥

इस प्रकार श्रीरघुनाथ जी की माता ने विचार करके इन बधुओं को अत्यन्त लाड़ प्यार किया और शुभ योग में इन बधुओं के सहित श्रीरामजी को सुन्दर गान बजान महोत्सव पूर्वक भीतर भवन में प्रवेश करने के लिये प्रेरित किया ॥४१॥

उद्वाह्य गौणेन गरीयसींगुरुः शतं सहस्राणि सुता महीपतेः ॥
आयाति रामो रवि वंश भूषणः श्रुत्वेति हर्षं प्रययौ च मैथिली ॥४२॥

महाराज श्रीचक्रवर्ति कुमार सौ हजार राजाओं की कन्याओं को गौण रूप में विवाह करके सूर्यकुल के भूषण सबके गुरू श्रीरामजी महल में आरहे हैं ऐसा सुनकर श्रीमैथिली जो अति हर्ष को प्राप्त हुई ॥४२॥

द्वारं बृहद्वर्षावरैश्च रचितं तदा सखीभिः सहसा समागता ॥
परस्परं वीक्ष्य मनोहराननं सवारि नेत्रौ च परस्परोस्थितौ॥४३॥

और अपनी बहुत सी सखियों के साथ सहसा उठकर राजवर्दी पहनी हुई हजारों दासियों से सुरक्षित अपने बहुत बड़े महल के बृहद् फाटक पर आ पहुँची। इधर बधुओं के सहित श्रीरामजी को देखकर प्रियतम के मनोहर मुखचन्द्र के दर्शन से प्रिया जू के दोनों नेत्रों में स्नेह का जल भर आया। और प्रिया जू के मुखचन्द्र को देखकर प्रियतम जू के नेत्रों में भी स्नेह का जल भर आया। इस प्रकार परस्पर ॥४३॥

आश्लिष्य चैकासन संस्थिता वुभौ नीराज्य सीता रघुनन्दनौ मुदा ॥
पुनश्चता राजसुता नीराजितुं यतः सखीभिः प्रथमं प्रपेदिरे ॥४४॥

गलबाहीं देकर दोनों सरकार एक सिंहासन पर बिराजे और उन दोनों सरकार की आरती के लिये श्रीकिशोरी जी की सखियों ने इन्तजाम किया और सरकार के साथ में आई हुई राजकन्यायें पहले आरती करें उसके बाद हम करेंगी ऐसा निश्चय किया उन राजकन्याओं को आरती के लिये पहले प्रेरित किया ॥४४॥

नताश्च ता राजसुता यथा क्रमं जन्मान्तरैः प्राप्य च वाञ्छितं किल ॥
पादौ पर प्रेम भरेण जगृहुः श्रीराम पत्न्याः जन मङ्गल प्रदौ ॥४५॥

उन सब राजकन्याओं ने कई जन्मों से इच्छा करते २ आज ये जुगल सरकार हमको प्राप्त हुए हैं ऐसा मन में निश्चय करके अति अनुराग पूर्वक दोनों सरकारों को प्रणाम किया। परा प्रेम में भरे हुये दोनों श्रीराम सीता जू के चरण पकड़ करके ये ही आश्रितके लिए मङ्गल प्रदान करती हैं ऐसा निश्चय करके स्तुति करने लगीं ॥४५॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषाया मुमा महेश्वर
सम्वादे मार्ग क्रम वर्णनो नाम अष्टः पञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५६॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां मार्ग क्रम वर्णनो नाम
अष्टः पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तम् ॥५६

चन्द्रकन्योवाच-हे सीते जनकात्जे रघुवर प्राणप्रिये पाहिनः ॥
पद्माद्यर्चित पद्मरागनिभयोः सम्वाहने नानयोः ॥

चन्द्रकायें बोली कि हे सीते ! जनमात्मजे ! हे रघुवर प्राणप्रिये ! श्रीमहालक्ष्मीसे पूजित आपके इन श्रीकमल सदृश चरणों की सेवा करते हुये हम लोगों की आप रक्षा करें॥

इत्युक्त्वा प्रथमं चतासु प्रथमा कर्त्तुं स्तुतिं प्रारभेत् ॥
प्रेम्णागद्गदया गिराश्रु नयना छन्दो वृती माश्रिता॥१

इस प्रकार उन सब कन्याओं ने प्रेम से गदगद होकर आखों से आँसुओं की धारा बहाते हुए अपने को श्रीकिशोरी जू की दासी मानती हुई प्रथम सामूहिक स्तुति को किया उसके बाद उन सब कन्याओं की एक जो मुख्य यूथेश्वरी थी उसने विस्तार से स्तुति की ॥१॥

राजसुतोवाच—न तेनुरागो नखर प्रभाशतेजितेन्दु शोभे सततं सदंचिते ॥
येषां पदाब्जे रघुनाथ वल्लभे तेषां वृथा कृच्छ्रतमेन साधनैः ॥२॥

राजकन्या बोली कि हे रघुनाथ वल्लभे जिनका अनुराग सैकड़ों चन्द्रमाओं के शोभा को जीतने वाले नखों से युक्त हमेशा सज्जनों से पूजित कमल के सदृश सुन्दर आपके श्रीचरण कमलों में मजबूत नहीं होगया है उन लोगों के लिए कठिनतम साधनों में कष्ट करना व्यर्थ है ॥२॥

अंघ्रेः सरोजाभ हरस्य ते किल जातो शतस्तेन मयङ्क सौभगः ॥
भाले भवानी मुद वर्द्धनः सदा दधाति तं तापहरं सुसेविनाम् ॥३॥

हे स्वामिनी जू ! कमल की आभा को हरण करने वाले आपके चरण कमलों की उङ्गलियों में उत्पन्न हुये जो नख हैं वे सैकड़ों चन्द्रमाओं की शोभा से अधिक सुभग नख भवानीके आनन्द को बढ़ाने वाले शङ्कर जी अपने भाल में रखते हैं जो नख सेवा करने वाले आश्रितों के संतापों को हरण करते हैं ॥३॥

न ते जनानां हृदयास्पदं पदं प्रद्योतितं यन्न खरो त्रिपंक्तिभिः ॥
परार्द्ध रत्नांचित भूषणां चितं तनो तु नो मङ्गल मुत्सवं किल ॥४॥

आश्रितों का हृदय ही है निवास स्थान जिनका ऐसे आपके चरण कमल उनके अँगुलियों में प्रकाश करने वाले नखों की पंक्ति और त्रिसकीसतीय परार्द्ध भूषणों से भूषित आपके श्रीचरण कमल हम लोगों के लिए क्या अद्भुत मङ्गलमयी उत्सव विस्तार करें ॥४॥

भार्य्यास्वनंतासु सुभार्य्य कस्यते कुलेन रूपेण गुणैश्च त्वा दृशी ॥
नो दृश्यते तत्र कुतोधिकाभवेत्प्रियस्य रामस्य न चेति शंसनम् ॥५॥

सुन्दर भार्य्यारूप में आपको प्राप्त किए हुए जो आपके प्रियतम हैं उनके यद्यपि उत्तम कुलरूप गुणवती अनन्त स्त्रियायें हैं वे समस्त स्त्रियायें आपके सदृश कोई भी नहीं दीख पड़ती हैं तब आपसे अधिक इन प्रिय श्रीरामजीको अन्य प्रियायें कहाँसे हो सकती हैं यह बात सही है यदि नही है तो आपही कहिये कौन है ॥५॥

त्वत्पाद पद्मे नरतात्मनां विभो न लौकिका नैव परार्द्ध सिद्धयः ॥
त्वत्पाद पद्मे निरतानिरन्तरं तेषा मकृच्छ्रेण समस्त सौलभम् ॥६॥

हे अनन्त सामर्थ्यवती श्रीस्वामिनी जू जिनका अंतःकरण आपके श्रीचरण कमलों में असक्त हो चुका है वे लोग लौकिक ऐश्वर्यको कोन कहे पर अर्थ सिद्धियोंको भी वे नहीं चाहते हैं निरन्तर आपके श्रीचरणकमलों में ही निरत रहने वाले उनके लिए बिना ही परिश्रम के समस्त सिद्धियां सुलभता पूर्वक प्राप्त रहती हैं ॥६॥

यावन्ति रूपाणि हरेः पराणि लोकान्तर स्थानि तवावताराः ॥
तेषांनियन्ता तवकान्त कान्तः सोयं वशस्ते खिल लोकनाथः ॥७॥

इन श्री परात्पर पुरुष प्रियतम जू के जितने भी रूप अनन्त लोकों बैकुण्ठों में रहते हैं तथा जितने इनके अवतार हैं उन सबके नियन्ता उर प्रेरक ये आपके कान्त ही हैं सो इस प्रकार के परात्पर पुरुष अखिल लोकों के नाथ ये श्री प्रियतम जू आपके वश में रहते ॥७॥

रसै रसज्ञं स्मित चेष्टितेन रज्वेव साकिंहि त्वया मनोजः ॥
बबन्धरामं किल ताल गत्या गुणीव रागैः रसिकं प्रियं च ॥८॥

जैसे कोई गुणी अनङ्ग को रस्सी से बाँध देवे इस प्रकार अपने बड़े रसज्ञ रसिक प्रिय इन श्री रामजी को अपनी मन्द मुसुक्यान रसीली चेष्टाओं से तथा नृत्यगान राग ताल गुण गतियों से श्रीराम जी को आपने बाँध दिया ॥८॥

प्राणादप्यतिकान्त वल्लभ तमेत्येवं महत्वाश्रिते–
सापत्न्यं परि हृत्य तासु विनयं यत्ते विदेहात्मजे ॥
तत्रा सां च महोदयं गणयितुं शेषोपि नस्यात्प्रभुः॥
पत्युश्चैव सुखस्य मूल मितिते कारुण्य धाम्नः सदा ॥६॥

हे श्रीविदेहात्मजे ! आप यह श्रीप्रियतम जू की प्राणों से भी अधिक प्रिया अति वल्लभतमा हैं और महान ऐश्वर्य की मूलभूता हैं इतना होने पर भी आपने सपत्नीभाव को त्याग करके जिनकी सुन्दर विनय को सुन लिया है उनके भाग्य के महान् उदय को शेष जी भी गणना करने के लिये समर्थ नहीं हैं। और करुणा के सदा निवास स्थान सुख के मूल आपके पति के सुखों की भी गणना शेष ज नहीं कर सकते हैं ॥६॥

चित्तं छद्म सपत्न एव नितरांधीः सद्गुणालंकृता॥
शीलेनाक्षि युगं समस्त शुभगे भालं तु भाग्याक्षरैः॥
कौटिल्येन भ्रुवौ चत्यक्त मनसा तन्मध्यकं विन्दुना॥
तुण्डे नेव शुकस्य तेपि सदृशी नाशा सुगन्धोन्मिता॥१०

हे स्वामिनीजी ! आपका चित्त सौत भावके छिद्र से रहित है और बुद्धि निरन्तर सुन्दर सद्–गुणों से अलंकृता है और दोनों नेत्र आपके शील गुणों से भरे हैं, आपका भाल सुन्दर शौभाग्य को देने वाले समस्त सौभाग्य के अच्छरों से अलंकृतहैं आपकी भृकुटी कुटिल है पर मन समस्त कुटिलता रहित है। आपके भाल के मध्य में भृकुटी के बीच विन्दु शोभित है आपकी नासिका सुक के तुण्ड के सदृश सुशोभित है जिसमें सुन्दर सुगन्धि भरी है ॥१०॥

सुक्त्या कारतया च कर्ण युगलं सद्भूपणैश्चाप्यदो
गण्डौ वर्तुल दर्प्पणेन सदृशौ मूषाश्रयो मौक्तिकैः॥
दन्तानांवर पंक्ति वज्र मणिभा स्ताम्बूल रागारुणा–
मन्द स्मेर तयांचित स्वधरयोर्युग्मं जगन्मातृके ॥११

हे जगत की माता ! आपके दोनों कान सूक्तिका के आकार के सुन्दर भूषणों से अलंकृत है, कपोल दर्पण के सदृश सिर से झुकी मुक्ताओं की गुच्छियों से शोभित हैं। आपके दांतों की पंक्ति हीराओं के सदृश चमकती हुई पान की लालिमा से रँगे शोभित हैं। मन्द मुसुक्यान से दोनों अधर ओष्ठ शोभित हैं ॥११॥

पत्युर्वर्णक इन्दु पूर्णवदने विन्दुश्चते शोभनो-
गौराङ्गे चिबुके चमत्कृत तया तेनापि चालंकृतम्॥
गीतेन स्वर सप्तकेन ललितः कण्ठ स्वलंकारितो-
रेखाभिः कलकम्बुनापि सदृशी ग्रीवास्व लंकारिता॥१२

आपके पूर्ण चन्द्रमा सदृश मुख चन्द्र के चिबुक में प्रियतम जू के रँग का विन्दु शोभित है जो गौर रँग के चिबुक में श्याम रंग का चमकता हुआ उससे भी चिबुक अलंकृत है और सातों स्वरों से पूर्ण सुन्दर ललित गीत से आपका कण्ठ अलंकृत है इस प्रकार के शंख सदृश कण्ठ में तीन रेखायें भी कण्ठ को अलंकृत की हुई है ॥१२॥

बाहु दौ च विभूषणैः करयुगं स्वार्ग्येषु नत्यं जलौ-
दानेनाभय मुद्रयापि शुभगे शोभां लभेत्सर्वदा ॥
वक्षोयौप्रियमोद कंद मधुरौ हारै मनोहारिभि-
र्मुक्तानांमणिमिश्रतैः सुरुचिरैर्दिव्यद्भिरालंकृतौ ॥१३॥

आपकी दोनों भुजायें भूषणों से और करकमल पूज्य वर्गों के लिए अञ्जलि बाँधे हुये और आश्रितों के लिये दान से तथा अभय मुद्रा से अतिशय शोभित हैं। हे शुभगे ! आपके दोनों वक्षस्थल प्रियतम जू के लिये आनन्द के कन्द मधुर मनोहारी मुक्ताओं के हारों से मणि मिश्रित सुन्दर रुचिर अलंकारों से अलंकृत सर्वदा सुन्दर शोभा को प्राप्त रहते हैं ॥१३॥

दोषाक्रान्त जनेपिते विजयतेहृत्कोमलंसद्व्रतो ॥
स्वानन्देनसुफुल्ल कञ्ज सदृशं वात्सल्यता स्वाश्रयम् ॥
दिव्यानन्त गुणैर्द्विरेफनिवहे रध्यासितं सर्वदा ॥
तेनेव स्मरनः कृपालु हृदये चेटी गणे गौणतः॥ १४॥

हे आश्रितों के लिये सत् विरुदावली युक्त रक्षण व्रत वाली श्रीस्वामिनी जू ! आपका हृदय अतिशय कोमल है। दोषों से जकड़े हुये आश्रितों के लिये भी वात्सल्यता के भाव से भरे हुये अपने आनन्द से खिले हुए कमल सदृश दिव्य अनन्त गुणों से परिपूर्ण आपके हृदय की और नेत्र कमलों की जय हो। जो आपका हृदय कमल दिव्य अनन्त सद्गुण रूप भवरों से गुञ्जित हुआ ऐसे कृपालु हृदय से हम सब दासी गणों को भी हमेशा गौण रूप से सर्वदा स्मरण करें ॥१४॥

ब्रह्मेव साक्षात्तनु मध्यकाङ्कं विलोक्यते चात्मनि तान वन्दधन्
बिवेश पञ्चानन एव पर्वतं माने गते किं महतां जने स्थितिः॥१५॥

हे स्वामिनी जू ! आपका कटि प्रदेश साक्षात् ब्रह्म की तरह से सूक्ष्म देख करके सिंह अपनी आत्मा के अन्दर गौरव की बन्धन से लज्जित होकर पर्वत की गुफा में छिप गया क्योंकि महन् जनों के मान के नष्ट हो जाने पर फिर महत जनों में क्या किसी को स्थिति रह सकती है ? ।।१५।।

दिव्याम्बरै र्दिव्य विभूषणै र्वहिरन्त गु र्णैर्दिव्यतरै र्विभूषिता ॥

कीर्ति स्त्रिलोकी धवली कृता च ते स्व लंकृतं नित्य कुलं तया द्वयम् ।।१६।।

हे स्वामिनी जू ! आपका शरीर बाहर से दिव्य वस्त्र भूषणों से सुशोभित है और भीतर से दिव्य सद्गुणों से भूषित है इस प्रकार की आपने अपनी कीर्ति को तीनों लोकों में उज्ज्वल कर दिया। इसी उज्ज्वल कीर्ति से आपने अपने नैहर श्वसुराल दोनों कुलों को अलंकृत कर दिया ।।१६।।

सौन्दर्य्य शीलेन मुख प्रभामतैः रतिस्तथेंदुश्च तिरस्कृतौ त्वया ॥

हस्तश्रिया चैवथाहित पादयोस्तिरस्कृतं रक्त सरोज कं वनम् ।।१७।।

और अपने शौन्दर्य और शील से तथा मुख के सैकड़ों पूर्ण चन्द्र सदृश प्रकाश से रति व चन्द्रमा आपसे तिरस्कृत हो गये हैं। इसी प्रकार आपके हस्तकमलों की शोभा से तथा चरणकमलों का शोभा से लाल कमलों का वन तिरस्कृत होगया ।।१७।।

गाम्भीर्य्यं भावेन जितोम्बुधि स्त्वयाधृत्या मही वाक् च समस्त धी गुणैः ॥

अद्भिश्च रत्नैश्च तथाहि सागरो धिया गुणैः पूर्णतमासि त्वं सदा ।।१८।।

अपने गम्भीर भाव से समुद्र को आपने जीत लिया। अपने धैर्य से पृथ्वि को जीत लिया। अपनी बुद्धि के सद्गुणों से सरस्वती को जीत लिया। जिस प्रकार समुद्र जल से और रत्नों से भरा रहता है उसी प्रकार आप बुद्धि के सद्गुणों से स्नेह से पूर्ण रहती हैं ।।१८।।

लोकान्तरं दिव्यतरः सु सेविनां भाले कुवर्णा न पि लोपिभिः शुभैः।।

विराजते राजसुते गुणैः समं रूपं त्व नङ्गे विलशत्प्रकाशितैः ।।१६।।

सुन्दर सेवा करने वाले आश्रितों के मस्तक में कुअङ्कों को भी लुप्त करते हुये अपने दिव्य सद्-गुणों से आप उनको अपने दिव्य लोकों में भेज देती है इस प्रकार के स्वभाव वाली हे राजपुत्री ! आप अपने दिव्यतर गुणों से प्रकाश करती हुई अपने सदृश स्वभाव वाले अपने अनङ्ग के सदृश प्रियतम में विलास करती हैं ।।१६।।

उच्चैस्तरां लोक सुशंशिते कुले सुरेन्द्र ताधः कृत कोटि वैभवे ॥

जाता पुनः सौभग रूप संशिते न तुल्यता मेति त्वया हरि प्रिया ।।२०।।

सर्व लोक प्रशंसनीय उच्चत्तर उत्तम कुल में प्रकट हो करके अपने कोटि गुने अधिक वैभव से इन्द्र को नीचा कर दिया। इस प्रकार की प्रकट होने वाली अतिशय प्रशंसनीय सौभाग्य रूप वाली आप की तुल्यता में विष्णु की प्रिया लक्ष्मी नहीं आ सकती है ।।२०।।

कथं न पत्यु र्नयनोत्सवा भवेद्वधूगुणै रूप कुलेन त्वादृशी ॥

मनोहरं वस्तु पवित्र जन्मालोके भवेत्तद्धि सुदुर्ल्लभं नृणाम् ।।२१।।

जो कोई बधू अपने गुण रूप व कुल से आपके सदृश हो वह प्रियतम के नेत्र उत्सव के लिए क्यों न होगी ? लोक में मनुष्यों के लिए पवित्रता पूर्वक उत्पन्न हुई मनोहर वस्तु अतिशय दुर्लभ होती है ।।२१।।

सुरेन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्र कन्यका यस्या वरोधे प्रिय रूप लक्षणाः ॥
सवाप्त कामोपि त्वया सकामयेत्स्वन्नेन तृप्तोपि यथेच्छत सुधाम् ॥२२॥

जिसके घर में देवेन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्र कन्याओं को भीड़ लगी है जो कन्यायें अत्यन्त प्रिय रूप लक्षण वाली हैं उन सबके रहते हुए भी तथा स्वयं पूर्णकाम होते हुए भी श्रीप्रियतमजू आपके लिए हमेशा कामना करते रहते हैं। आपकी बोली से उसी तरह लालायित रहते हैं जैसे—कोई तृप्त हुआ पुरुष फिर भी अमृत की इच्छा करता ही है ॥२२॥

शिल्पां भवत्याः पद पृष्ठ युग्मके प्रकाशितुं लक्तक रागचित्रकैः ॥
आदाय रत्नानि वहूनि स्वां जलौ नत्यौ जयन्त्व स्य सखी गणेषु ते ॥२३॥

हे स्वामिनी जू! सखिगणों के बीच में छिपे हुए आपको भूषित करने के लिए अपनी अञ्जलि विविध प्रकार के बहुत से रत्नों को लिए हुए आपके युगल चरण कमलों के पृष्ठ भाग में अप ी शिल्पविद्या को प्रकाशित करने के लिये लाक्षारंग (महावर) की चित्रकारी करते हुये आपके चरणों में प्रणाम करने वाले (प्रियतम की जय हो ॥२२॥

कान्ता पदाब्जा भरणाति झंकृते त्वया निदाघे प्रमदा वनान्तके ॥
विरच्य पुष्पांचितया सुभूषणै र्गायन्हसन्सद्भि हरन्न यत्यसौ ॥२४॥

गर्मी के दिनों में प्रमदावन के अन्दर युवतियों के चरण कमल नूपुरों के झंकार से झंकृत कुञ्जों में पुष्पों से रचना किये हुये सुन्दर भूषणों द्वारा सुन्दर शृङ्गार करके और पुष्प पर्यंक आदिकों को रचना करके आपके साथ गाते हँसते अनेक प्रकार के विहार करने वाले हे स्वामिनी जी! इन आपके प्रियतम की जय हो ॥२४॥

समुत्प्लव न्नाल्पवय न्सुवारिण हस्तेन हस्तं च त्वया नियोजयन् ॥
आर्द्रालका लिप्त कपोल शोभनो जयत्यसौ जानकि वल्लभस्तव ॥२५॥

आपका हाथ पकड़ करके सुन्दर जल से भरे हुये सरोवर में ऊँचे बुर्जों से जल में कूदते हुये आपके साथ जल में बूड़ने वाले फिर दोनों जने जल से ऊपर उतर करके भीजे हुये कपोलों पर चिपके हुये अलकों से शोभित हे श्रीजानकी जी! ये आपके वल्लभ की जय हो ॥२५॥

क्वचि न्निदाघे जल यंत्र मण्डले प्रफुल्ल पङ्के रुह चारु लोचनः ॥
आर्द्रां सुको यंत्र मुखानि भ्राम यन्त्वा मार्द्रयन्प्राण पति जय त्यसौ ॥२६॥

कहीं २ गर्मी के दिनों में बहुत से जल जंत्रों के मण्डल के अन्दर खिले हुये कमल के समान विशाल नेत्र वाले भीजे हुए कपड़ाओं से लथपथ अङ्ग वाले श्रीप्रियतम जू बहुत सुन्दर जल जंत्र को हाथ में लेकर के घुमाते हुये सब सखियों के और आपके मुख मे फुआरा छोड़ते हुये आपको भिजाने वाले इन प्राणपति की जय हो ॥२६॥

दास्यामि दास्यामि वदन्ददाति नोयथा धनाढ्यो कृपिण स्वभावतः ॥
तथा सुचौ मेघ उपेत्य मण्डलश्चिरान्न वर्षत्यपि गर्ज्जयन्मुहुः ॥२७॥

जो मैं देऊँगा २ कह करके स्वाभाविक कृपण धनिक की तरह से फिर नहीं देते हैं, तथा जैसे आकाश में उदय हुये मेघ मण्डल बहुत देर से बार २ गर्जते हुये भी नहीं बरसता है उसी प्रकार पवित्र विलास स्थानों में सबको बार २ तरसाने वाले इन प्रियतमकी जय हो ।।२७।।

इत्थं वदन् त्वां प्रतिमोदय न्हसन्तद्वाटिकाया भवने त्वया सह ।।
स्थितः सखीनां परिशात्य मण्डले जयत्यसौ जानकि वल्लभस्तव ।।२८।।

देंगे २ यह कह करके और हँस करके आपको आनन्दित करते हुये कभी आपको वाटिका में ले जाने वाले कभी भवन में ले जाने वाले कभी सखियों के मण्डल से घिरे हुए बैठ करके बात करने वाले हे जानकी ! इन आपके प्रियतम की जय हो ! ।।२८।।

स्व मूर्ति दिव्यो पयितु' नभस्तलं त्वदंगभा सातडिदेव सादृशी ।।
आसार संजात मृदङ्ग वद्ध्वनिं श्रुत्वानन तुश्च कल्पायिनां गणाः ।।२९।।

कभी २ आकाश मण्डल में अपने मूर्ति को दिव्य मेघ मण्डल की उपमा में रख करके आपकी अङ्ग शोभा को बिजली सदृश बना करके और इन मृदङ्गादि संगीत की ध्वनि को मेघ की गर्जना बना करके सुनाकर सखि समाज रूप मयूरों के गणों को नचाने वाले आपके प्रीतम की जय हो ।।२९।।

एतन्निरीक्ष्याथ नितान्त कौतुकंमुद प्रदीपं प्रति पद्म मेघः ।।
इत्थं वदन्प्राण पतिस्त्वया सह जयत्यसौ जानकि मोद वर्द्धनः ।।३०।।

और इस आकार के मेघ मण्डल व बिजली की चमक को देख करके अतिशय कौतुक पूर्वक आनन्द को प्रकट करने के लिए श्रीप्रियतम जू प्रिया जू से कहते हैं कि हे प्रिये ! यह देखो, यह मेघमण्डल मेरे से विरोध करते हुये मेरा प्रतिद्वन्द कर रहा है, इस प्रकार कहते हुये आपके साथ आनन्द को बढ़ाते हुये हे जानकी ! यह आपके प्रियतम की जय हो ।।३०।।

उत्पश्यकान्ते परितो वितानकं कृत्वास्थितः श्रावणिकः सुमेघः ।
विद्युद्विलाशस्तु तदन्तरं यन्मद न्तरं कर्षति तत्प्रकामम् ।।३१।।

हे कान्ते ! ये उधर देखिये तो, यह श्रावण का सुन्दर मेघ चारों तरफ से वितान तान करके बैठा है और देखिये तो उस मेघ के भीतर में बिजली का विलास हो रहा है इस प्रकार का यह मेघ मेरे अतःकरण को अत्यन्त विलासाक्त करके खींच रहा है ।।३१।।

इत्थं वदन्त्वां प्रति हर्म्य जाले पश्य न्नवाम्भोज विशाल नेत्रः ।।
विनोदयन्प्रीति विशेषवाणया जयत्यसौ जानकि वल्लभस्ते ।।३२।

इस प्रकार कहते हुये महल के प्रत्येक छज्जाओं में आपके साथ जालियों द्वारा आकाश को देखाते हुये कमल के सदृश विशाल नेत्र वाले प्रीति की विशेषता पूर्वक वाणियों से आपको विनोदित करते हुये हे जानकी ! इन आपके वल्लभ की जय हो ।।३२।।

सजल जलद कान्ति दीव्य साटो त्वदङ्गे तदुपरि कलधौते नापि सूत्रेण प्रान्तं ।।
रचित रुचिर शोभंतत्तडिद्भातिकारं प्रिय हृदय सुभूमौ मोदवल्लीं निषिञ्चेत्।।३३

हे स्वामिनी जी! आपके अङ्ग की यह दिव्य साड़ी सजल जलद की सी कान्ति वाली शोभित है और इस साड़ी के ऊपर स्वर्ण सूत्रों से बनी हुई किनारी जो रचना की गई है इसकी अतिशय रुचिर शोभा विजली सा काम करती हुई प्रतीत हो रही है। श्रीप्रियतम जू के हृदय रूपी भूमि में आनन्दमयी लता को सींच रही है ॥३३॥

भूषा मौक्तिक तारकाति सदृशी पूर्णेन्दुनास्यप्रभा –
मंदं मन्द मनोहर स्मित मिदं यन्ते लशत्कौमुदी ॥
नेत्रे खञ्जन केलिरङ्ग सुरभि वाचामृतं श्रावयें–
दित्थं त्वां परिपश्यतो रघुपते दृष्टिश्चकोरायते ॥३४॥

हे स्वामिनी जी ! आपके शरीर रूप आकाश में मुक्ताओं के भूषण रूप ताराओं की पंक्ति आप मुख रूप पूर्णमासी का चन्द्रमा इस चन्द्रमा में मन्द २ मनोहर मुसुक्यान रूपी प्रकाश इस प्रकार जो आपके शरीर रूप आकाश में प्रकाशित हो रही है, आपके खञ्जन सदृश चंचल नेत्रों में केलि के रङ्ग रूप सुगन्धि से भरे हुए शोभित हैं। वाणी रूप अमृत की वरषा करने हुये इस प्रकार आपके मुख चन्द्र को सम्यक प्रकार देखने वाले श्री रघुपति जी की दृष्टि चकोर का रूप धारण की हुई है ॥३४॥

त्वदङ्ग संसर्ग्ग सुगन्धि मारुतं स्वाघ्राय नान्येषु मनोदधेत्प्रियः ॥
सम्वन्धिनं चेदधिकं गुणैरपि हित्वा तदन्यं किमुसंश्रयेद्बुधः ॥३५॥

हे स्वामिनी जी ! आपके श्रीअङ्ग सुगन्धि से संसगित वायु का स्वाद लेकर के अब प्रियतम जू अन्य सुगन्धियों के लिये मनको नही बढ़ाते हैं। इसी प्रकार कोई भी प्रियतम जू का सम्बन्धी गुणोंको आपसे अधिक भी हो तो क्या विद्वान इन प्रियतम जू को त्याग करके अन्य आश्रयण कर सकता है ? अपितु नहीं। (अर्थात हम सब आपकी ही आश्रिता हैं) ॥३५॥

त वेदं यद्वेदैः प्रचुर भणितं ज्योति रखिलं–
प्रभा सोमेर्केऽग्नौ चरण नख दीपैश्च परित ॥
तदस्माकं सीते प्रसरतु परं भाव हृदये –
यतः कैंकर्य्याख्यं सतत मव शेषं सुखयते ॥३६॥

हे स्वामिनी जू ! वेदों ने जो आपके अङ्ग प्रकाशको अतिशय बढ़ा हुआ ब्रह्म ज्योति रूप समस्त ज्योतियों का कारण बताया है और चन्द्रमा सूर्य अग्नि में आपके चरणोंके नखो से प्राप्त हुआ प्रकाश बताता है सो हे सीते ! यह आपके चरणों का प्रकाश हम लोगों के सुन्दर भावना किये हुए हृदय में परम प्रकाशित हो जिससे हम लोग सतत् कैंकर्य रूप समस्त सुखों की सीमा को प्राप्त हो सकें ॥३६॥

अग्न्यर्क रत्नै रचिता गृहा वहु तूलोर्ण वासांसि महोष्णकानि च ॥
सन्त्येव कान्तस्तु कदाप्युदग्रकं सीते नु सीतं न जयेत्वया विना ॥३७॥

हे स्वामिनी जी ! श्रीकनक भवन में अग्नि सूर्य रत्नों से निर्माण हुए बहुत घरों के रहने पर भी और उन घरों में बहुत प्रकार सूती ऊनी महान् गर्मी को पैदा करने वाले बहुत से वस्त्र ओढ़ने बिछाने के बिछाने के लिए सम्यक प्रकार होते हुए भी कभी २ प्रियतम जू ठण्ढो से अत्यन्त संतप्त होकर आपसे कहते हैं कि हे सीते ! मैं आपके बिना इस ठण्डी को नही जीत सकता हूँ ॥३७॥

ढक्काश्च कांश्यं च मृदङ्ग झर्झरं सखीजने गायति वादपत्यलम् ॥
पक्षे प्रियायाः प्रिय पक्षकाश्चता उच्चारयंत्यो जयशब्द मुच्चकैः ॥३८॥

हे स्वामिनी जी ! ये आपके और श्रीप्रियतम जू के सखिसमाज में ढोलक, झांझ, मृदंग, झर-झर सम्यक प्रकार बजाते हुए दोनों पक्ष की सखियां आप दोनों सरकार की ऊँचे स्वरों से जय बोलती हैं ॥३८॥

गणैः सखीनां शिशिरे प्रिया प्रियौ श्रीजानकी राघव केलि चञ्चलौ ॥
धृत्वा करे कौंकुम वारि जंत्रकं निषिंच यन्तौ जयतः परस्परम् ॥३६॥

हे स्वामिनी जू ! कभी २ शिशिर ऋतु में बहुत सी सखिगणों को साथ लेकर दोनों श्रीजानकी राघव केलि चंचल हुए प्रिया प्रितम के हाथों में फूलों के रंग भरे हुए जल जंत्रों को लेकर परस्पर भिजाते हुए अपनी जय की कामना करते हैं ॥३६॥

प्रिया प्रियस्यो परिकैतवेन च तथा प्रियाया उपरि प्रियो हसन् ॥
चिप्तारुणं चूर्ण सितं सुगन्धिना रणन् झणन्प्लायति धावयेत् मुदा ॥४०॥

कभी प्रिया जू ! प्रियतम के ऊपर छल करके रङ्ग डाल देती हैं उसी प्रकार कभी श्रीप्रियतम जू भी हँसते हुए प्रिया जू के ऊपर छल से रङ्ग डाल देते हैं और लाल सफेद सुगन्धित चूर्ण को डालते हुए भूषणों की झनकार करते हुए एक दूसरे को जीतने की इच्छा से आनन्द मग्न होते हुए दौड़ते हैं ॥४०॥

इत्थं तु ते प्राणधनेन केलयो जयन्तु सार्द्धं सकला कलांचिताः ॥
सीते सुधाग्रा भवने सुकानके महानके शब्दति शब्द मुच्चकैः ॥४१॥

इस प्रकार के आपके प्राण धन प्रियतम जू आपके साथ केलि करते हुये सब कलाओं से घिरी हुई पण्डिता आपको जीत लेवें, हे सीते ! इस प्रकार के आप दोनों के विलास में केलिकौतुक होते हुये कभी अमृतमयी महलों में सुन्दर वनों में महान् अमृतीमयी शब्द ऊँचे स्वर से गुञ्जित होता है॥४१

वर्द्धतां जनकात्मजे सुख रसै र्गानैः सखीनां मुदा—
धावन्तीभि रशेष भूषण झणत्कारैः सखीभिस्तथा ॥
वादित्रध्वनिभिश्च खंभुवि तलं कुर्वंश्च चूर्णारुणं —
यंत्रैः कुम्कुम वारि पूर्ण कनकैः कान्तेन ते केलयः॥४२॥

हे जनकात्मजे ! सखियों के गान आनन्द सुख रसों से भीजी हुई और समस्त भूषणों से सजी हुई और प्रियतम जूके साथ होली कौतुक केलि में दौड़ता हुई भूषणोंके झनकार से झंकृत तथा बाजाओं के आवाज से आकाश और पृथ्वी को पूर्ण करती हुइ गुलाल के अरुण रंग कुम्कुम और विविध प्रकार के रंगों से भरी हुई पिचकारी आदिक जंत्र लिए हुए प्रियतम जू के साथ विनोद संघर्ष में आपकी केलियां अत्यन्त वृद्धि को प्राप्त होवें ॥४२॥

प्रियाया भूषितः प्रेम्णा कपोलालक शोभ्यसौ ॥
रत्न दण्डो चितं धृत्वा करे कौतुक माश्रयम् ॥४३॥

ये श्री प्रियतम अत्यन्त अनुराग पूर्वक श्री प्रियाजू के द्वारा भूषित होकर के कपोलों पर अलकों से अत्यन्त शोभायमान आपके साथ कौतुक विनोद करने की इच्छा से उत्तम रत्नों के दण्ड को लेकर ॥४३॥

फाल्गुण्यामथ पर्वण्यां विशेष ललितादिना ॥
जयतिस्म भर्त्सयन्त्वां नति प्रियो नत भ्रवाम् ॥४४॥

फाल्गुन पूर्णमासी के रोज विशेष करके सुन्दर केलि रंगों के साथ मोर्चा पर खड़े हुए आपको जीतने के लिए यद्यपि ये प्रियतम हमेशा आपको प्रणाम करना ही पसन्द करते हैं तो भी इस समय भर्त्सना दे रहे हैं और आप भी अपने दाव को ताकने के लिए उस समय नम्र दृष्टि से चुपचाप खड़ी हैं ॥४४॥

हास्याय हेमाथ सखीं विधाय तं वेषेण नाम्ना सुख सुन्दरी प्रियम्॥
निसर्गं मौग्ध्यान्न परीक्षितं त्वया सख्योट्ट हास्येन तदा जयन्तु ते ॥४५

इसके बाद एक हेमा नाम की सखी ने हास्य के लिए उन प्रियतम को सखी का वेष बनाकरके उस सखी का सुखसुन्दरी नाम रक्खा और उस सुख सुन्दरी के द्वारा आपके चरणों की सब सेव करायी गयी। परन्तु आपके अतिशय मुग्धता के वस होकर उन प्रियतम जू की परीक्षा न कर पायी। उस समय सखियों ने खूब ताली बजा करके अट्टहास्य किया इस प्रकार की आपकी केलिओं की जय हो ॥४५॥

मयूर वीणा द्यु पलक्षितेन त्वदन्तिकं प्राप्य वदं गुणानपि ॥
सरस्वती वेष उपेत कौतुक स्त्वयापि कान्तस्तु जयत्य लक्षितः ॥४६॥

हे स्वामिनि जू? मोर की सवारी में बैठे हुए सरस्वती के वेष को धारण किए हुए वीणादिक वस्तुओं को लेकर सरस्वती के योग्य सब सजावटों से सजे हुए आपके समीप आकर आपके दिव्यगुणों को गान करते हुए अपने प्रियतम जू को आपने नहीं पहचाना। इस प्रकार केलि करने वाले की जय हो ॥४६॥

तरोः शाखा मवलंव्य भुजा मे कां परस्परम् ॥
स्थिता वंशे निधायात केल्यंतजयतः प्रियौ ॥४७॥

एक २ भुजा से परस्पर गलबाही दिए हुए और एक २ भुजा से पेड़ की डाल को पकड़े हुए इस प्रकार परस्पर केलि करते हुए आप दोनों प्रियों की जय हो ॥४७॥

प्राप्ते वसन्ते प्रमदा वनान्तके श्रुत्वा निकुञ्जे पिक नादिता मुदा ॥
गिरं त्वदीयां तु तया विशेषय न्प्रतीपयन्त्वां मुदयं जयत्यसौ ॥४८॥

इसी तरह वसन्त ऋतु के प्राप्त होने पर प्रमोद वन के अन्दर एकान्त कुञ्जों में विराजे हुए आप दोनों के उस समय लन में कोकिलादि पक्षियों के कल्लोल को सुनकर प्रियतम जू ने आपकी बोली का कोयल की बोली से मेल किया। इस प्रकार परस्पर आनन्द पूर्वक केलि करते हुए आप दोनों की जय हो ॥४८॥

कुञ्जा न्निकुञ्जं भ्रमरै र्विगुञ्जितं विधं गणैः कूजित मद्भुता यनम् ॥
भ्रमन्भवत्या भुज मंश माद धज्जयत्यमा जानकि वल्लभस्तव ॥४९॥

हे श्री जानकी जी ? आपको गलबाहीं देकर एक कुञ्ज से, दूहरे कुञ्ज में तीसरे कुञ्ज में इस प्रकार भ्रमरपती आदिको से गुञ्जित कुञ्जों में आपके साथ भ्रमण करते हुए इन आपके वल्लभ को जय हो ॥४६॥

वासन्तिकं पुष्प पराग पल्लवं तथाहि सौरभ्य दिगन्त मुच्छ्रितम् ॥
एतैस्त्वदङ्गं विजयन्विचक्षणो जयत्यसौ जानकि वल्लभ स्तव॥५०॥

हे श्री जानकी जी ? बासन्तिक पुष्पों के पराग से रंगे हुए कोमल पल्लव भी सुगन्धि दिशाओंमें अत्यन्त बढ़ी हुई उस सुगन्धि को भी आपके श्री विग्रह की सुगन्धि जीत रही है इस प्रकार कहते हुए अत्यन्त सूक्ष्म बुद्धि वाले ये आपके प्रियतम की जय हो ॥५०॥

यथा वसन्तेवनराजि मद्भुतां सरद्दतौंश्च यथा लभेच्छविं ॥
सीते तथात्वं च रघुत्तमे सदा दधासि शोभां चपला घनांतरे ॥५१॥

हे स्वामिनिजू ? जिस प्रकार बसन्त ऋतुमें अद्भुत रंगवाले फूलों से भरी हुई वनोंकी पंक्ति शोभित है। और जिस प्रकार आकाश शरद् ऋतु में शोभित होता है; हे सीते ? जिस प्रकार मेघ के अन्दर विजली को शोभा होती है उसी प्रकार से आप भी हमेशा श्री रघुनाथ जी में शोभित हैं ॥५१॥

आत्मानं प्रति वेदि तुं जनकजे शक्ता वयं न स्वतः-
त्रैलोक्योत्तर सुकृतै विलसति त्वत्सख्य सांनिध्यकम् ॥
लब्धं यद्वहु जन्मभि मुनिवरैः कृच्छ्रेण संभाव्य ते-
तन्नि र्हेतुकत्वत्कृपागुणनिधे सत्कारणं गण्यते॥५२॥

हे गुणनिधे ? जनकजे ! हम लोग स्वतः अपनी आत्मा के स्वरूप को जानने के लिए अत्यन्त असमर्थ थे परन्तु त्रैलोक्य पुण्यसे अतिरिक्त जो एक अद्भुत पुण्य हमको प्राप्त हुआ है निर्हेतुकी आपक कृपा ही मुल कारण समझी जा सकती है। इस प्रकार कीआपकी कृपा से उत्पन्न हुआ जो त्रैलोलोत्तर पुण्य उससे हम लोग आपके उस सानिन्य सख्य सन्वन्ध को प्राप्त करते हैं ॥५२॥

वयन्ते किङ्कर्यो विशद गुण गणं गायमानोंमहद्भिः-
रमाभ्यं दासी भी रघुवर नयनांम्भोज भोगायताक्षि ॥
कदाचिन्मन्यध्वे गुण गण सुखमा शील सेवा न ताङ्गा ॥
स्तदास्माकं सीते किमपि शरण तां याति कान्या वरा को ॥५३॥

हे श्री रघुवीर नयन कमलों के भाग्य स्वरूप विशाल नेत्र वाली श्री स्वामिनी ! हम लोग जो निर्मल गुण गणों को गाने वाला आपकी कैङ्कर्य करने वाली दासी है बड़े २ लोग हम लोगों की सम्पन्नता नहीं कर सकते। हे सीते ? कदाचित आप लोगों को गुण युत और परमा शोभा सम्पन्ना परम शीलवती आपकी सेवा नम्र हुई हम लोगों को आप मानलें तो हे सीते ? तब अन्य कौन वराकी (तुच्छ) होगी कि जो हम आपकी शरणागतियों को समता को प्राप्त हो सकेगी ॥५३॥

प्रसादिता तया सीता स्तोत्रेण नृप कन्यया ॥
हृदयालुः कृपापूर्णा सा प्युवाच ततो परम ॥५४॥

इस प्रकार उन समस्त कन्याओं की मुखिया उस राजकन्या ने अपनी स्तुति से श्री किशोरी जू को प्रसन्न कर लिया। उसके बाद सहज स्वाभाविकी सरल हृदय वाली श्रीकिशोरी जी भी उसके उत्तरमें अत्यन्त कृपा से पूर्ण वचन बोलीं ॥५४॥

यूयं सर्वा मदीया स्युः कला भक्ति प्रवर्त्तये॥
कान्तस्य जीव लोके तु जीवान्जीवयितुं सदा । ५५॥

हे सखियों ? आप सब मेरी हो; और जीव लोक में जीवों को हमेशा संजीवनी बूटी रूप मेरे प्रियतम की भक्ति की कला का विस्तार करने के लिए गयी थीं ॥५५॥

भाव भक्ति समायोगात्पुनः प्राप्ता मदीच्छया ॥
तेन सुखयतां कान्तं मत्कृपा सुखमाप्नुयुः ॥५६॥

और फिर मेरी इच्छा से आप लोग भाव भक्ति का सुन्दर योग पाकर के मुझे प्राप्त हुई हो। इसलिए अब मेरी कृपा का फलस्वरूप मेरे प्रियतम को सुखी करो और तुमभी मेरी कृपाके फलस्वरूप सुख को प्राप्त करो ॥५६॥

एव मुक्त्वा प्यति स्नेहाज्ज्ञानक्या ता अपि प्रभाः॥
आनीय हृदये सर्वागाढ मालिंगिताश्चिरम् ॥५७॥

इस प्रकार श्री जानकी जी ने उन सबसे जब अति स्नेह पूर्वक कहा और उन सबको अपने हृदय से लगाकर बड़ी देर तक गाढ़ आलिंगन किया इस आलिंगन से वे श्रीकिशोरीजी के अङ्ग प्रकाश स्वरूपा अति ही सुखी हुईं ॥५७॥

यद्यप्येवास्य रामस्य सीता छायेव वर्तते ॥
तथाप्यद्यः मुमोदासौ सीतया स्वीकृता यदा ॥५८॥

यद्यपि श्री सीता जी इन श्री राम जी की छाया की तरह से व्यवहार करती हैं (श्री राम जी के स्वीकार करनेपर तो वे राजकन्याएं स्वीकार हो ही गयीं) तो भी इस समय श्री सीता जी के उन सबके स्वीकार करने से श्री राम जी अति प्रसन्न हुए ॥५८॥

उच्चध्वज पताकाभिः शिखिरैः परितोवृता ॥
भासिताः तोरण द्वारै र्बहु कक्षाभिरंतराः ॥५९॥

और जो श्री कनक भवन ऊँची ध्वजा पताकादि शिखरों से चारों तरफ अतिशय प्रकाशमान शोभित है और तोरण द्वार गली आदिकों से सुन्दर विस्तार पूर्वक सब महल अलग २ शोभित हैं ॥५९॥

ते तु वर्ष्म वरैर्द्वारं रक्षिता सर्वतो दिशः ॥
भोग भोगोप करणैः समन्ता त्परि पूरिताः ॥६०॥

और फाटकों पर सुन्दर शरीर तथा सजावट वाले द्वार पालों से प्रत्येक महल चारों तरफ सुरक्षित है और सभी महल भोग तथा भोग सामग्रियों से सम्यक् प्रकार पूर्ण भी हैं ॥६०॥

दिव्यास्तरणै युक्ताश्च वितानैः परिशोभिताः ॥
प्रसाद सु मुखा ताभ्योददौ प्रासाद राजयः ॥६१॥

और प्रत्येक महलों में दिव्य सब प्रकार के विस्तर बिछे हुए हैं और बितान परदादिकों से सुन्दर शोभित हैं इस प्रकारके श्रीकनकभवनकी स्वामिनी श्री किशोरी जी उन सब चन्द्रमुखियों के साथ महल के भीतर प्रवेश करके बहुत महलों को उन राजकन्याओं के लिए दिया ॥६१॥

आदृतैरासनं ता सां सभायां श्रेष्ट पंक्तिषु ॥
दिगन्त नृपकन्याभिः संकुलायां ददौ परम् ॥६२॥

उसके बाद श्रीकिशोरी जू ने अपने सभा कुञ्ज में भी समस्त दिशाओं की सब राजकन्याओं को उत्तम पंक्तियों में इन राज कन्याओं को बड़े आदर से परम आसन दिया ॥६२॥

लब्ध्वा रामं पतिं साक्षान्मूला दंकुरितो मुदः ॥
तासां सीता प्रपन्नायां सोऽभवत्कलवान्यथा ॥६३॥

इस प्रकार उन सब राजकन्याओं ने श्री सीता जी की प्रपत्ति करके उस प्रपत्ति का जो उत्तम फल होना चाहिए वह उत्तम फल अपनी आत्मा के कार्य कारण भेद मूल से अंकुरित होकर के साक्षात् श्री राम जी को पति रूप में प्राप्त करके आनन्द की सीमा में प्राप्त हुआ ॥६३॥

सभायां राम कान्ताया विविशुस्ताः शुभे दिने ॥
दृष्ट्वाश्चर्यं महैश्वर्यं भाव वन्धाधिकं ययुः ॥६४॥

सुन्दर दिनमुहूर्त में श्री रमाकान्ता जी की सभा में प्रवेश करके उन सब राजकन्याओं ने भाव को बन्धन देने वाला महान् आश्चर्य मयी ऐश्वर्य को भाव की सीमा से अधिक रूप में देखकर आश्चर्य को प्राप्त हो गयीं ॥६४॥

नत्युन्तरं तत्पदाब्जे सेविते सुर योषिताम् ॥
स्थापिताः प्रतिहारीभिः समीपे मुख्य पंक्तिषु ॥६५

सभा में प्रवेश करके श्री स्वामिनी जी आदि मुख्यों को प्रणाम करने के बाद उमा, रमा, ब्रह्माणी आदिक देवस्त्रियों से सेवित चरणों का दर्शन करके फिर प्रतिहारियों द्वारा श्री किशोरी के समीप मुख्य पंक्तियों में बैठाया गया ॥६५॥

विद्या शिल्प प्रवीणानां विद्या शिल्प परीक्षणम् ॥
कृतं तासां च जानक्याः सखी भिस्तत्समीक्षया ॥६६

इसके बाद श्री किशोरी जू की इच्छा से श्री जानकी जी की सखियों ने उन सब राजकन्याओं की विद्या और शिल्प कला प्रवीणता की परीक्षा की और जितनी विद्या और शिल्प कला में त्रुटि थी उन सबको अपनी शिक्षा से पूर्ण किया ॥६६॥

गुणैर्नैवाधिका प्रीतिः प्रेम्णा सम्बन्धतश्चवा ॥
परस्परं दृढत्वेन जाता चैकत्र योगतः ॥६७॥

प्रीति गुणों की अधिकता से भी नहीं होती है और प्रेममयी सम्बन्ध प्राप्त होने पर भी नहीं होती परन्तु परस्पर एकत्र योग पूर्वक दृढ़ता हो जानेसे प्रीति उत्पन्न होती है ॥६७॥

जानक्याधिक्य संश्लेषात्प्रीत्या स्वात्म जयापि च ॥
विस्मृतं तु पितुर्गेहं मातृणां लालनं तथा ॥६८॥

यद्यपि ये सब सखियाँ श्री किशोरीजी के अनुराग से ही अंश भूता उत्पन्न हुईं हैं परन्तु पिता के घर में माताओं के लाड़ प्यार से इन श्री किशोरी जू के अनुराग को भूल गयी थीं इस समय श्री जानकी जी के अधिक संश्लेष को पाकर के वह अनुराग पूर्ण रूप में प्राप्त हो गया ॥६८॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषाया मुमा महेश्वर सम्वादे दाक्षिण्य नृप कन्याना मुद्वाहेन श्रीरामप्राप्ति योगो नामैकोनषष्ठितमः सर्गः । ५९॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां दाक्षराय नृप कन्यानां उद्वाहेन श्री राम प्राप्ति योगो नामैकोनष्टष्टित्तमः सर्गः ५९॥

श्रीपार्वत्यूवाच—जनक्या सह रामस्य राजपुत्रस्य सर्वदा ॥
तद्रहस्यं कथं ज्ञात मागता भिस्तु सांप्रतम् ॥१॥

श्री पार्वती जी बोलीं कि हे शङ्कर जी ? श्री जानकी जी के सहित राजपुत्र श्री रामजीका अभी तुरन्त की आई हुई इन राजकन्याओं ने यह सर्वदा होने वाले गुप्त रहस्य को कैसे जान लिया ॥१॥

श्रीशिवउवाच—ये देवि मानुषे लोके सतां सङ्ग प्रभावतः॥
सीता रामार्पितधिय स्तेषा चैतादृशी गतिः ॥२॥

श्री शङ्कर जी बोले कि हे देवि ? जो मनुष्य लोक में संतों का सत्संग करते हैं; सत्संग के प्रभाव सेउकी श्री सीताराम जी के प्रति अर्पित बुद्धि होने से उनकी ऐसी ही गति होती है ॥२॥

भावयतां तद्रहस्यं हृदये ब्रह्म लौकिकम् ॥
नित्यं स्फुरति निःशेषं तेषांतज्जीवनं यतः ॥३॥
प्रेम्णा तया च तद्गीतं तत्प्रसन्नाय भावितम् ॥
भव्यं करोतु भक्तानां साधकानां च सिद्धिदम् ॥४।

श्री सीताराम जी के ब्रह्मलौकिक रहस्य को हृदय में हमेशा भावना करने से उस नित्य रहस्य का प्रकाश सम्यक्र प्रकार हृदय में स्फुरित हो जाता है अतः भजन करने वालों के लिए यही स्फुर्णा संजीवनी बूटी हो जाती है ॥३॥

बड़े अनुराग पूर्वक अतिशय प्रसनन्ता से भावना करके जो श्री सीताराम जी का गीत गाता है वह गीत भक्तों का कल्याण करने वाला हो साधकों के लिए सिद्धि देने वाला हो ॥४।

अथ देवौ जसो राज्ञः पुत्र्यु द्वाहे सुयागके ॥
निमंत्रणातु भूपालाः बहुशश्च समागताः ॥५॥

इसके बाद महाराज देवौज जी के कन्याओं के विवाह के समय में जो बहुत से राजाओं ने श्री राम जी के लिए निमंत्रण किया था वे सब राजा आ पहुंचे गए थे ॥५।

ते सुमन्तं कौशलेश सख्यं विज्ञाप्य भावतः ॥
स्वस्य स्वस्य गृहे नेतुं प्रुच्यु द्वाह मिषेण च ॥६॥

इन सबने श्री महाराज कोसलेश जी के सखा सुमंत्र जी को अपने भाव से स्नेह का परिचय देकर के अपने २ घरों में कन्याओं के विवाह के बहाने बुला ले जाने को प्रार्थना किए थे ॥६॥

रामं रूप वशीकारं वव्रिरे हि तदैवहि ॥
कुमकुमाचत माला भिर्विधाय च विशेषकम् ॥७॥

अपने रूप से मोहित करने वाले श्री राम जी को उसी विवाह प्रसङ्ग में ही कुंकुम अक्षत मालाओं द्वारा तिलक आदि विशेष विधान कराके वरण कर लिया था ॥७॥

पुनस्तत्फलितार्थाय फल योग्यै र्नराधिपैः ॥
बहुशो पायनैश्चैव सहस्र विनयै र्नृप ॥८॥

फिर उसी वरण विधान के फलस्वरूप उत्पन्न करने के लिए उन योग्य राजाओं ने बहुत से उपायनभेटों के सहित हजारों प्रकार की विनय पत्रिकाओं को लिखकर के ।८।

विवाह लग्न दिवसं सोधयित्वा महात्मभिः ॥
विद्वग्दिः सचिवै र्मुख्यैः प्रेषिता पूज्य पत्रिका ॥९॥

महात्माओं द्वारा सुन्दर विवाह लग्न दिवस संसोधन करके और मुख्य मंत्रियों और विद्वानों द्वारा निश्चय करके उस पूज्य पत्रिका को,श्री अयोध्या जी में भेजा ।९॥

लंघयतः क्रमान मार्ग माययु र्बहुभिर्दिनैः ॥
ते विद्वां सःसचिवाश्च ध्वजन्या ध्वज वत्युग्म् ॥१०॥

वे मुख्य मंत्री और विद्वान मार्ग में बहुत से पर्वत नदियों का उल्लंघन करते हुए सुन्दर ध्वजा पताकाओं से शोभित सर्वोतम श्री अयोध्या पुरी में बहुत दिनों में आ पहुँच गए ।१०॥

श्रीमद्दशरथस्यै व श्रीनिवासं प्रति श्रुतम् ॥
अयोध्याख्यं महारम्यं रमणीय प्रदेशकम् ॥११॥

महाराज श्री दशरथ जी के श्री अयोध्या नाम की नगरी महा रमणीय साक्षात श्री जी का निवास स्थान जो लोक वेद सर्वत्र प्रसिद्ध है जिस अयोध्या पुरी के प्रत्येक अङ्ग अतिशय रमणीय हैं ॥११॥

मण्डलानां सहस्रैश्च सदृशश्चन्द्र सूययोः ॥
दृष्ट्वा योध्या तु दाक्षिण्यैः प्राशादैः परि संकुला ॥१२

जिस अयोध्या पुरी में हजारों मण्डल हैं प्रत्येक मण्डल करोड़ों सूर्य व चन्द्रमाओं के सदृश प्रकाश करते हैं जिसमें अनन्त महल अति सघनता से भरे हैं इस प्रकार को श्री अयोध्या पुरी को उन दक्षिण देश से आए हुए विद्वान और मंत्रियों ने देखा ॥१२॥

अयोध्यायां दूरतस्ते तु लग्न प्रक्षिप्त दृष्टयः ॥
दिदृक्षवो ददृशुश्च रत्न मन्दिर रश्मिभिः ॥१३॥

यद्यपि अभी वे लोग दूर हैं पर एक दम समीप की तरह से श्री अयोध्या जी का सामूहिक दृश्य नेत्रों में चकाचौंधीं दिया। मणिमय महलों की किरणों से शोभित श्री अयोध्या नगरी को देखने को इच्छा हो रही है ॥१३॥

अयोध्याया श्चो पवने चरता मुन्मिता स्तुतैः ॥
मृगाणां कण्ठ रत्नैश्च दाक्षिण्योः सम्पदोधिकाः ॥१४

श्री अयोध्या पुरी के बाहरी भाग में जो उपवन हैं उन उपवनों में चरने वाले मृगाओं के कण्ठरत्नों को ही देखकर हमारे राजाओं की सम्पत्ति इनके कण्ठरत्नों के बराबर भी नही है ॥१४॥

द्रुतस्वरैर्गान वाद्यै नृर्त्यैश्च वर योषिताम् ॥
वाटिका सुविहरतां पौराणा मुन्मितं सुखम् ॥१५॥

और उन बाहरी उपवनों और बाटिकाओं में विहार करने वाले पुरबासियों के द्वारों पर दूतों द्वारा तथा विलास स्थानों में स्त्रियों के गान बाद्य नृत्य से तथा प्रतिहारियों से समाचार शब्द से और वाटिकाओं के पक्षी भ्रमरादिकों के गुञ्जारों से गुञ्जित अतिशय बढ़ा हुआ सुख देखा। ॥१५॥

होम धूमैश्च परितः प्रसरत्स्वाज्य गन्धिभिः ॥
वहुशो ब्राह्मणानां च निवासश्चोप लक्षितः ॥१६॥

और हवन के धुँआ से चारों तरफ सुगन्धित विविध प्रकार की सुगन्धित हविष्य सामग्रियों के बहुत से सुन्दर महलों को भी देखा ॥१६॥

पुरस्य विहरंतीभिः प्रत्यंतोपवनेषु च ।
ऋद्धि मतां सुदासीभिश्चातुर्य्येण च विद्यया ॥१७॥

नगर के बाहर की दासियाँ अपने बन उपवनों में विहार करती हुई विविध प्रकार की विद्याओं के चातुर्य से प्रकाश करती हुई अतिशय ऐश्वर्यवतो उनको देखा॥१७॥

तेषां दाक्षिण्य विद्वद्भ्यः सुन्दरीणां समंततः ॥
अधिकाः सुरयोषिद्भ्यः सूचिता रूप संपदः ॥१८॥

उन दासियों के सङ्गीत विद्या को सुन्दरता से (दक्षिणा गाथकाः) इस वार्तिक को झूठा करने बाली देवस्त्रियों से भी अधिक रूप सम्पत्तिवाली ऐसा उनको देखा ॥१८॥

आगच्छद्भिर्दिगन्तेभ्यो धनिभिर्व्यवसायिभिः ॥
पुर प्रवेश मार्गेण संकुलेन नृपस्य वै ॥१९॥

और दशों दिशाओं से बड़े २ धनिक लोग व्यापार के लिए श्री अयोध्या जो के प्रवेश मार्गो में भीड़ लगाए हुए हैं ॥१९॥

कथितः कौशलेन्द्रस्य कोशेषु च धना गमः ॥
प्रजानां रक्षणे शक्ति र्दाक्षिण्येभ्यः स्फुटं न यैः ॥२०॥

इस प्रकार जनता के बाहरी दृश्य से ही दाक्षिणीय राजदूतों ने महाराज कोसलेशजीके खजाने में धन का आगमन और महाराज के नीति से प्रजा रक्षण की अद्भुद शक्ति को प्रत्यक्ष देखा ॥२०॥

दृढ द्वार कपाटैश्च स्पृशद्भिः शिखरै र्नभम् ॥
दूराद्दुर्गेण दुर्गेण कौशलेशस्य सर्वदा ॥२१॥

और नगर के बाहरी परकोटाओं के आकाशचुम्बी मजबूत फाटकों को उन फाटकों पर लगे हुए बहुत ऊँचे कलशों को और सर्वदा अति दुर्गम बहुत ऊँचे दुर्गों को दूर से ही देखा ॥२१॥

दुराधर्ष्यं तु शत्रुभ्यो वेष्ठिते नवलैरपि ॥
कथितं सर्वथा चास्य सूच्चागारां तरेणवै ॥२२॥

इन ऊँचे परकोटाओं से ऐसा प्रतीत होता है कि महाराज कोसलेश जी के धर्षणा के लिए अपनी सेना आदिक समस्त शक्तियों से सत्रू कितना ही आक्रमण करे पर महाराज सर्वथा दुराधर्ष हैं ॥२२॥

तं च दूरात्प्रपश्यन्तो विद्वां सः सचिवास्तथा ॥
प्राकारं नगरस्यास्य मुदं प्रापुर्महत्तराम् ॥२३॥

इस प्रकार के नगर के परकोटा को दूर से ही देखते हुए दक्षिणीय मंत्री और द्विवान लोग महान् महत्तर आनन्द को प्राप्त हुए ॥२३

तावच्चेतः सुमन्तोपि तेषां दूतेन ज्ञापितः ॥
विज्ञाप्य कौशलेन्द्रं तु सहर्ष वेष्ठितो जनैः ॥२४॥

इधर नगर के बाहरी संरक्षक दूतों ने शीघ्र जाकर महाराज श्री सुमंत्र जी को जनाया और श्री सुमंत्र जी भी अपने सभासदों से घिरे हुए महाराज कोसलेश जी को उन दक्षिणीय मंत्री और ब्राह्मणों का आगमन जनाए ॥२४॥

सेवितश्चोप सचिवैः रथेन रस्मि शालिना ॥
हर्षस्य कारणं तेषां विदुषां च समाययौ ॥२५॥

महाराज की आज्ञा पाकर बहुत से उपमंत्री आदिक सेवकों से सेवित महाराज सुमंत्र जी प्रकाशमान रथ में बैठकर उन दक्षिणीय द्विवानादिकोके पास आए जो आपका आगमन उन लोगोंके लिए अतिशय हर्ष का कारण हुआ ॥२५॥

प्रणम्य विदुषां पादे समाश्लिष्या परैर्मुदाम् ॥
संस्थाप्य तान् सुवाग्भिश्च तै र्दत्तासन संस्थिताः ॥२६।

श्री सुमंत्र जी ने विद्वानों के चरणों में प्रणाम किया और सबको अलिंगन किया फिर उनके ठहरने के इन्तजाम महल सबको सुन्दर आसन देकर सुन्दर वाणी से आदर पूर्वक बैठाया ॥२६॥

उवाच कुशल प्रच्छा मुक्त तैर्दर्शनादयम् ॥
भवतां कुशलं नो वै समयः शुभ दर्शिनाम् ॥२७॥

सुमंत्र जी ने उन सबसे कुशल पूछी उन सब दक्षिणियों ने कहा कि सुन्दर दर्शनीय आप लोगों की कुशल दर्शन से हम लोगों की सर्वदा कुशल है। समस्त कुशलों का मूल यह इस समय का आपक दर्शन है ॥२७॥

त्वं मनः कौशलेन्द्रस्य सर्व वित्सर्वदा शुचिः ।।
अभिलाषां कुरौ स्माकं द्वि दलस्तं सुवर्द्ध य ।।२८।।

आप महाराज श्री कोसलेन्द्र जी के सर्वदा सब कुछ जानने वाले पवित्र मन के सदृश हैं और हम लोगों की अभिलाषा दो दलक अङ्कुर की तरह से पैदा हुई सो उस अङ्कुर को आप बढ़ावें ।।२८।।

स्वाति मेघश्चातकानां विबुधानां सुर द्रुमः ।।
शीलादि स्व गुणौदार्यै र्भवत्वं भव्य दर्शनः ।। २६।।

क्योंकि आप मङ्गल मयी हैं अतः हम सबके लिए जैसे चातक के लिए स्वाँति का मेघ और देवताओं के लिए कल्पवृक्ष' ऐसे हो जावें, क्योंकि आप शीलादिक सद्गुणों से भूषित उदार हैं ।।२६।।

सर्वज्ञानां समीपे तु वहुना कथनेन किम् ।।
नेत्रानु भावतो ज्ञात्वा यदा चरसि भूपतेः ।।३०।।

सर्वज्ञ महापुरुषों के नजदीक ज्यादा कहने से क्या फायदा आपतो महाराजके नेत्र अनुभव से ही सब बात जानकर आचरण करने वाले हैं ।।३०।।

कौशलेश पद द्वंद्वं पश्यामो येन केन वै ।।
सर्वार्पणं करिष्यामः मर्वेषामिति वांछितम् ।।३१।।

जैसे भी हो सके हम लोग महाराज श्री कोसलेश जी के चरण कमलों का दर्शन कर सकें तब हम लोग अपना सर्वस्व अर्पण करेंगे यही हम सबकी इच्छा है ।।३१

एत न्निशम्यतेषां च वाक्यं वाक्य विदाम्वरः ।।
कारयित्वांशुका गारे स्थितिं सोपि समागतः ।।३२।।

इस प्रकार उन सबकी बातों को सुनकर बाक्यों को सुन्दर तरह समझने में श्रेष्ठ श्री सुमंत्र जी ने उन सब विद्वान और मंत्रियों को वस्त्रों के महलों में ठहराय करके फिर आप लौट आए ।।३२।।

समीपे कौशलेन्द्रस्य श्रावितां वचनावलिम् ।।
राज्ञापि गुरुसात् कृत्वा प्रत्युक्तश्चोत्तर स्तदा ।३३।।

महाराज श्री कोलेन्द्र जी के पास आकर उन सबकी बचन रचनावली को सुनाया । सुनकर महाराज ने भी अपने गुरू श्रीवसिष्ठ जी को सब कहा सुनाया ।।३३।।

वहुभि र्वस्तुभिः श्रीमत्कोशलेन्द्रेण चादरः ।।
प्रेपितोपि नांगीकारः कृतस्तै स्तु विवेकिभिः ।।३४।

उसके बाद महाराज श्रीमान कोसलेन्द्र जी ने बहुत सी सामग्रियों को बड़े आदर पूर्वक उन सबके स्वागतके लिए भेजा परन्तु वे सभी बड़े विवेकी हैं इसलिए उनने नहीं स्वीकार किया ।।३४।।

सम्बन्धेन च पुत्रीणा मिति योग्यं सतां मते।।
न च तद्भूमिजं वस्तु तैरादत्तं कदाचन ।३५।।

क्योंकि सन्तों का मत है कि कन्याओं की सम्बन्धीय भूमि में उत्पन्न हुई वस्तु कन्याके पितृपक्ष वालों के लिए उचित नहीं है ऐसा जानकर किसी तरह से भी उन्होंने नहीं स्वीकार किया ॥३५॥

अथांतरं सभायां च महिता महितात्मनः ॥
दाक्षिण्याः कौशलेन्द्रस्य महत्यान्ते समागताः ॥३६॥

इसके बाद जगत पूज्य महात्मा श्री कोसलेन्द्र जी की महान् सभा में वे दक्षिण से आए हुए पवित्र आत्मा विद्वान मंत्री लोग आ पहुंचे ॥३६॥

यत्स्पृशा लोकपालानां शिरसादुर्ल्लभा किल ॥
दाक्षिण्यास्तु समुत्थाय चाहतास्तेतदासनात् ॥३७॥

जो इन्द्र, कुबेर, वरुण, यमराजों लोक पालों के सिर से भी स्पर्श करने के लिए दुर्लभ सिंहासन से महाराज श्री चक्रवर्ति जी उठ करके उन दक्षिणी विद्वान् और मंत्रियों का आदर किया ॥३६॥

नृपाणां पतिना साक्षात्तत्तु लोके प्रदर्शितम् ॥
अहो सम्बन्ध मात्रस्य फलमुच्चै स्तरां व्रजेत् ॥३८॥

लोक में साक्षात् समस्त राजाओं के पति श्री चक्रवर्ति महाराज ने यह सौहार्द दिखाया अहो? आश्चर्य है कि सम्बन्ध मात्र से ही बहुत उच्चतर फल प्राप्त हो जाता है ॥३८॥

विप्रास्तु सर्वतः पूज्याः पूजयित्वा शुभासने ॥
स्थापिता पतिनाराज्ञां कौशलेन्द्रेण भावतः ॥३९॥

समस्त राजाओं के पति महाराज श्री कोसलेन्द्र जी नें बड़े भाव पूर्वक उन दक्षिणीय ब्राह्मणों को सुन्दर आसनों पर बैठाकरके पूजा की क्योंकि ब्राह्मण तो सर्वत्र पूजित होते ही हैं ॥३९॥

तदा रत्नैश्च बहुभिः कौशलेश पादावुभौ ॥
सचिवैर्दाक्षिण्यानां नृपाणां पूजिता वलम् ॥४०॥

फिर उसके बाद दाक्षिणीय राजाओं के मंत्रियों ने भी बहुत से रत्नवन से महाराज श्री कोसलेश जी के युगल चरण कमलों की सम्यक प्रकार पूजा की ॥४०॥

निः सारिते सम्पुटाच्यें तद्रत्नानां सुरस्मिभिः ॥
चमत्कृतिमवा पाथ सभ्यानां नेत्र संवतिः ॥४१॥

उस पूजा में चढ़ाने के लिए जो रत्न संपुटों (डिब्बाओं) से निकाले गए उनके प्रकाश से उस सभा में सभी सभ्यजनों के नेत्रों में एक वेग चका चौंधी लग गयी ॥४१॥

वासांसि च नृपार्हाणि यदन्यत्कौतुकादिकम् ॥
प्रीत्या प्रशंसनः सर्वं कौशलेन्द्रेण स्वीकृतम् ॥४२॥

और उसी प्रकार से राजाओं के योग्य उत्तम बहुत वस्त्र और कौतुक पैदा करने वाले उत्तम खिलौने समर्पण किए गए और महाराज श्री कोसलेन्द्र जी ने भी बड़ी प्रशंसा पूर्वक प्रेम से सब स्वीकार किए ॥४२॥

उत्तमाश्वा गजाश्चैव दृष्ट्यग्रं विनयादपि ॥
निवेदिताश्च निपुणैः सचिवैः सुखमानसैः ॥४३॥

और उत्तम घोड़े तथा हाथी भी उन सब उन सब चतुर दाक्षिणीय मंत्रियों ने बड़ी नम्रता पूर्वक मन से अत्यन्त सुखी होकर के दृष्टि के आगे सब समर्पण किए ॥४३॥

रामस्योपरिरत्नानि भ्रातृभिः सहितस्यतु ॥
बहूनि परिवर्त्याथ याचकेभ्योददुश्चते ॥४४॥

इसके बाद भ्राताओं के सहित बैठे हुए श्री राम जी के ऊपर बहुत से रत्नों को न्यौछावर करके उन रत्नों को याचकों के लिए देदिया ॥४४॥

महार्हं वस्त्रभूषादि राज्ञीभिर्यच्च प्रेषितम् ॥
विभागैर्भिन्न माकल्प्य तदुक्त्या तत्र चार्पितम् ॥४५॥

फिर उसके बाद दाक्षिणीय राजाओं की रानियों ने जो बड़ी उत्सुकता पूर्वक बिसकीमतीय भूषण और वस्त्रों को जो भेजा था उनको भी सुन्दर विभाग पूर्वक अलग २ नामों करके मंत्रियों ने श्री राम जी के लिए अर्पण किया ॥४५॥

तथा वशिष्ठं सं पूज्य पूजनीयं सजातिभिः ॥
लग्न पत्रं पवित्राय तस्मै लग्न विदेर्प्पितम् ॥४६॥

फिर उसके बाद उसी तरह से समस्त ब्राह्मण जातियों से पूजित महाराज श्री वसिष्ठ जी की भी पूजा की और उन पवित्र आत्मा श्रीवसिष्ठ जी के करकमलोंमें लग्न पत्रिका को भी ब्राह्मणों ने निवेदित किया ॥४६॥

तेन सं श्रावितं राज्ञे श्री मद्दशरथाय च ॥
मंत्रं कृत्वा लिखित्वा सत्सुमन्ते नोत्तरोत्तरम् ॥४७॥

श्रीवसिष्ठ जी ने उस लग्नपत्रिका को श्रीमत्दशरथ जी को सुनाया उसके बाद आपस में मंत्रणा करके एक पत्र लिखा। उस पत्र को सुमन्त्र जी ने उन दक्षिणीय मन्त्रियों के हाथ उत्तर दिया ॥४७॥

सिद्धाभिलाषं राज्ञां च सम्बन्धो त्कण्ठितांतु यम् ॥
कोविदानां करे दत्तं कुंकुमेनतु चर्चितम् ॥४८॥

उस उत्तर पत्र को कुम्कुम से रँगा करके और पत्र के ऊपर सम्बन्ध के लिये उत्कण्ठित हुए राजाओं की अभिलाषा सिद्ध होगयी यह लिखकर विद्वानों के हाथ दे दिया ॥४८॥

तोषयित्वा सुवाग्भिश्च सादरेण सुहार्दतः ॥
गुरुणाहि वशिष्ठेन स्वदेशाभि मुखी कृताः ॥४६॥

और वाणी से भी सुन्दर सौहार्दता पूर्वक बड़े आदर से बोल करके सबको सन्तुष्ट किया इस प्रकार श्रीवसिष्ठ जी आदि से आद्रित होकर वे सब विद्वान और मन्त्री अपने २ देश जाने के लिए सन्मुख हुये ॥४६॥

मन्दी कृदीप पंक्तीनां रत्नानां च समूहकैः ॥
कोशेषूपचयं कृत्वा कौशलेन्द्रस्य ते पुनः ॥५०॥

दीपकों के प्रकाश को मन्द करने वाले उन समस्त रत्नों को महाराज कोशलेन्द्र जी के खजाने में जमा कर दिए गए ॥५०॥

दाक्षिण्यानां लब्धकामाः सचिवाश्च पुरोधसः ॥
नृपाणां क्रम तो मार्गं लंघयित्वा च पर्वतान् ॥५१॥

दाक्षिणीय राजाओं के मन्त्री और उपरोहित अपने मनोरथों को सफल पाकर के धीरे २ पर्वत और नदियों को तथा वनों को पार करते हुए ॥५१॥

प्रपेदिरे पुरीं स्वां स्वां हर्ष निर्भर मानसाः ॥
सचिवैः स्वामिनो हस्ते दत्ताः सूत्तर पत्रिकाः ॥५२

बड़े प्रसन्न मन होकर के अपने २ देश नगरियों में पहुँच गये और अपनी उत्तर पत्रिका अपने २ स्वामियों को दी ॥५२॥

न्यस्त वर्णा सुमन्तेन राज्ञा तुल्येन तेन च ॥
अत्यादृत किलात्मानं मेनिरेते नरेश्वराः ॥५३॥

वे सब राजा लोग भी सुन्दर साफ अलग २ अक्षरों से मङ्गल चिन्ह से युक्त पत्रिकाओं को पा करके अपने को महाराज चक्रवर्ति जी के योग्य न मानते हुए भी इस स्वीकार पत्रिका से अपनी आत्मा को कृत कृत्य मानने लगे अतः बड़े आदर से पत्रिका लिये॥५३॥

प्रति वाक्यं ह्यु दुगृणंतः सुधा पान मिवात्मनि ॥
सुखन्तेन भवन्तश्च वाचिता सा च पत्रिका ॥५४॥

और मन्त्री तथा ब्राह्मणों के मुख से भी श्रीअवधेश महाराज की सभा की बातों को सुनते हुए मानो अमृत पी रहे हैं। इस प्रकार की आत्मा में प्रसन्नता मानकर सुनते हुए राजाओं को मन्त्रियां ने कहा कि आपकी पत्रिकायें बड़े सुख पूर्वक चक्रवर्ती महाराज ने बचवा कर सुनी हैं॥५४॥

मुहूर्त्तं सुख मग्नास्ते वाह्य दृष्टि विरामिताः ॥
ततः संज्ञां सुलब्धास्ते तत्कार्य्ये च मनो दधुः ॥५५॥

इस प्रकार मन्त्रियों व विद्वानों की वातों को सुनकर वे सभी राजा लोग एक मुहूर्त के लिए तो सुख की समाधि में मग्न होगए उसके वाद समाधि से विराम होकर वाह्य दृष्टि करके सुन्दर होश पाकर अपने २ उचित कार्यों में बड़ी सावधानता से लग गये॥५५॥

प्रथमं ये न मार्गेणागमिष्यति नराधिपः ॥
तन्मार्गं तु निवासैश्च शिल्पिनो भो विरच्यताम् ॥५६

प्रथम तो महाराज जिस मार्ग से आयेंगे उस मार्ग में शिल्पियों के द्वारा सुन्दर निवासों की कल्पना करके आप लोग निवासों की रचना करो ऐसी आज्ञा दी ॥५६॥

इति वाक्यं मुखात्तेषां प्रथमे च प्रवर्तितम् ॥
स्वप्नमिव जाग्रतानां च तदेव प्रीति लक्षणम् ॥५७॥

इस प्रकार अपने राजाओं के मुख से आज्ञाको सुनते ही इन लोगों ने पहले से ही सब तैयारी की रचना कर रक्खी है इस प्रकार कहते हुए उन कारीगरों की बातों को मानो कोई सोया हुआ स्वप्न देखा फिर तुरन्त जाग्रत हुआ उठकर कहता हो इस प्रकार सबके उत्साह को देखकर यही प्रेम का लक्षण हैं ऐसा निश्चय किया ॥५७॥

अथात्र च सुमन्तेन सचिवैश्चापि कार्य्यभिः ॥
भूषा रत्नोऽस्त्र वृत्तानां स्यन्दनानां तथा परम् ॥५८॥

अब इधर श्री अयोध्या जी में श्रीसुमन्त्र जी ने अपने इन कार्यकर्ताओं के द्वारा सुन्दर रत्नों के भूषण वस्त्र फूल माला तथा रथ आदि ॥५८॥

गजाश्व सुखयानानां सम वर्णैश्च पंक्तिभिः ॥
श्रीराम वरयानाय सज्जनै श्चोपपादितम् ॥५९॥

हाथी, घोड़ा, सुखपाल आदि सवारियां अपने २ रूप रङ्ग से समान वर्णो की पंक्तियां श्रीरामजी की बरात के लिये सज्जन कार्यकर्त्ताओं ने शीघ्रता पूर्वक तैयार कर दिया ॥५९॥

ततः परं शतघ्नीनां भूमा गारेण ज्योतिषाम् ॥
विद्यु त्पात इवा त्युग्र मानकैः सह नादितैः ॥६०॥

उसके बाद तोपों का इन्तजाम तथा आकाश दीपों का इन्तजाम और वज्रपात के सदृश नगाड़ाओं का इन्तजाम और अनेक प्रकार के बाजाओं का भी सुन्दर इन्तजाम किया गया ॥६०॥

आरेणु भूतलं कुर्वन् रेणु पूर्णं नभस्तलम् ॥
अतिभारात्कूर्म्म पृष्टं मुखैः शेषेन ग्रासितं ॥६१॥

इस प्रकार इन्तजाम पूर्वक चलते हुए बरात के पृथ्वी से धूलि उड़कर आकाश पूर्ण कर दिया गया। बरातियों के सामूहिक भार से कमठको पीठ को शेष ने अपने मुखों से ग्रसित कर लिया ॥६१॥

दिग्गजानां शिरोभिश्चान मितैः सुतरां तथा ॥
कम्पयद्भिश्च कुधरै र्मह्यावारि समूद्गरन् ॥६२॥

दिग्गजों के सिरों से भी भूमि अतिशय नम्र होगई तथा पर्वत भी पृथ्वीको दबाते हुये कांपने लगे इस प्रकार दबती हुई पृथ्वी जहां तहां से पानी की पिचकारियां छोड़ने लगी ॥६२॥

भङ्गै र्हीना न्समुद्रांश्च मरुद्भिष्टम्भयं स्तथा ॥
दिशोऽन्तं दीप मानेषु सकुन्तेषु समन्ततः ॥६३॥

समुद्र अपनी लहरों से रहित हो गये। वायु रुक गया। दिशाओं में प्रकाश करते हुये चारों तरफ दिव्य पक्षियां दीपों को लेकर प्रकाश कर रहीं हैं ॥६३

प्रकाशितं ध्वजैरुच्चैः स्वर्ण सूत्रेण चित्रितैः ॥
गजानां स्वंकुशै रथैश्च राज्ञां रत्न किरीटकैः ॥६४॥

और ऊँची ध्वजाएँ भी स्वर्ण सूत्रों से निर्मित चित्रों से विचित्र प्रकाश कर रही हैं। हाथियों की सजावट और उनके अंकुशों की चमक तथा राजाओं के मुकुटों के रत्नों से सब दिशाओं में प्रकाश छाया है ॥६४॥

शब्दयंश्च दिशः सर्वाः प्रतिशब्दैः महाद्भुतैः ॥
भूमिस्यामायमानां स तु तमस्तोमनिभैः गजैः ॥६५॥

बरात में बाजा आदिक अनेक प्रकार के महान शब्दों से दिशाएँ तथा [illegible] प्रतिध्वनित हो रही हैं और अंधकार समूह के सदृश बड़े २ हाथियों के झुण्ड से पृथ्वी श्यामता से छा गयी ॥६५॥

परं करतलाभ्यां च कौतुकं द्रष्टु मागतैः ॥
आच्छादद्भिस्तु देवै रनिमेषैस्तु तं क्षणे ॥६६॥

इधर हाथियों के समूह से छाया हुआ अन्धकार और उधर आकाश में निमेष रहित देवताओं के द्वारा भगवान के परत्व को ढाँकने के लिए किया हुआ अन्धकार इस तरह ढकी हुई बरात के चमत्कार को ग्रामीण दर्शकों के देखने के लिए कमल नेत्र श्री रघुनाथ जी ने दोनों करकमल तालुओं से प्रकाश कर दिया ॥६६॥

प्रतस्थे दशरथो राज्ञां राजा कौतुक मावहन् ॥
विवाहितं तु श्रीरामं गौणे नैव गुणाधिकम् ॥६७॥

इस प्रकार के अनेक कौतुकों को रास्ते में अनुभव करते हुए समस्त राजाओं के राजा महाराज श्री दशरथ जी महान् गुणों में बढ़े हुए श्री राम जी यद्यपि विवाहित हैं फिर भी श्री राम जी के गौण विवाह के लिए चले जा रहे हैं ॥६७॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां उमा महेश्वर सम्वादे श्रीरामवरयानप्रस्थाने नाम षष्टितमः सर्गः ॥[illegible]॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां दाक्षराय नृप कन्यानां श्रीरामवरयान प्रस्थाने नाम षष्टितमः सर्गः [illegible]॥

श्रीशिवोवाच-अथ प्राप्तो महासैन्यैः कान्तारैश्च शिलोच्चयैः ॥
सरिद्भिश्चावृतं मार्गं दुर्गं दुर्गमविक्रमः ॥१॥

इस प्रकार मार्ग में घोर जंगलों से तथा भारी पर्वतों से और नदियों से अत्यन्त दुर्गमनीय कठिनाइयों को पार करते हुए महान् सेना के सहित ॥१॥

लंघयित्वा नृपाधीशो देशे दाक्षिण्यके पुरम् ॥
नाम्ना माणवकं तत्र राजा चोद्धत विक्रमः ॥२॥

महाराज श्री चक्रवर्ती जी बहुत से दाक्षिणात्य देशों और ग्रामों को लाँघते हुए एक माणवक नाम की नगरी को प्राप्त हुए वहाँ पर उद्धतविक्रम राजा के घर पहुँचे ॥२॥

ये नोद्वाहाय पुत्रीणां पूर्व रामस्तु स्वीकृतः ॥
रूपाधिक्या द्गुणाधिक्या त्सुमन्त मनु नत्य च ॥३॥

जिन उद्धर्तविक्रम ने अपनी कन्याओं के बिवाह के लिए पहले ही से श्री राम जी को तिलक कर रक्खा था क्योंकि श्री राम जो जो रूप और गुणों में अतिशय अधिक हैं इस लिए सुमंत्र जी से बड़े अनुनय विनय पूर्वक यह बात निश्चित हो चुकी थी ॥३॥

सज्जी कृत्वा वाहिनीं चा ने तुं स्वस्मिन्पुरे तुतम् ॥
प्रधाने नान्य सचिवाः गान वाद्योत्सवे न च ॥४॥

अतः उद्धत विक्रम ने भी श्री राम जी की बरात के स्वागत के लिए अपनी तरफ सेना स्वागत सामग्री सजकरके महान् गान बजान उत्सव पूर्वक अपने प्रधान मंत्री को भेजा ॥४॥

प्रेषिताश्चाति हर्षेण तेपि हर्षितमानसाः ॥
उत्सुकाः पूर्ण चन्द्रास्यं रामं दृष्टुं मनोहरम् ॥५॥

उद्धत विक्रम ने जो अपनी तरफ से बरातियों के स्वागत्के लिए भेजा हैं वे सब अतिशय हर्षित मन होकर पूर्ण चन्द्रसदृश अतिशय मनोहर श्री राम मुख चन्द्र को देखने के लिए बड़ी उत्सुकता से आए ॥५॥

पूर्वमेवाभि रचितं चित्रितैः खण्ड भावितैः ॥
यानस्य कौशलेशस्य निवासाय समुल्वणम् ॥६॥

उधर महाराज उद्धत विक्रम जो ने महाराज कोसलेश जी के बरात के सहित निवास के लिये बड़ी विस्तार पूर्वक चित्र विचित्र खण्ड की भावना से बहुत ही सुन्दर जनवासा पहले से ही बन, रक्खा था ॥६॥

आदरेण समागम्य सो पदः सचिवो महान् ॥
निवेश्य च महाराजं तस्मिंश्चित्र निवासके ॥७॥

इधर उद्धत विक्रम जी की भेजी हुई विक्रम जी की अगवानी बरात प्रधान मंत्री के साथ आयी और बड़े आदर पूर्वक परस्पर समागम हुआ। उसके बाद उसी चित्र विचित्र रचना वाले महान् जनवासे में सबको ठहराया ॥७॥

पुनः स्वनाथ निकटं मुदितो हि समाययौ ॥
तदैश्वर्य मृजु त्वं च श्रुत्वा सुख मवाप्नुयात् ॥८॥

उसके बाद प्रधान मंत्री अपने नाथ उद्धतविक्रम जी के पास बड़ी प्रसन्नता से आए और महाराज श्री दशरथ जी के ऐश्वर्य को और उनकी सरलता को अपने राजा से वर्णन करके सुनाया। सुनकर राजा भी अतिशय सुख को प्राप्त हुए ॥८॥

ततः शुभर्क्षे दिवसे सुलग्ने ग्रहे शुभस्थान समागमे च
अत्यादरेणैव महोत्सवेन श्रीकोशलेन्द्रो गुरुणासमाजैः ॥९॥

इसके बाद सुन्दर नक्षत्र शुभ दिन में सुन्दर लग्न ग्रह में, शुभ स्थान के समागम में महाराज श्री कोसलेन्द्र जी को गुरू श्री वसिष्ठ जी तथा समाज के सहित बड़े आदर महान उत्सव पूर्वक ॥६॥

नतिस्तदा माणव के श्वरेण गृहे सु दीप्ते सुविशाल कक्षे ।
प्रक्षाल्य पादौ बहुशः सुवर्णं न्समर्पयित्वोत्तम संश्रया च ॥१०॥

माणवक नाम की नगरी के राजा ने महान प्रकाशमान कई आवरण वाले अपने बहुत बड़े महल में लिवा लाए और श्री चक्रवर्ति जी महाराज के चरण प्रक्षालन किए तथा बहुत सा स्वर्ण समर्पण किए। बड़ी नम्रतापूर्वक उत्तम विधान से ॥१०॥

लक्षैक दानेन वरस्य पादाम्भोज शीला वतिहर्षितेन ॥
तस्यानुजाना मपितत्सुरीत्या प्रक्षालितौ तेन सपत्निकेन॥११

अतिशय हर्षित होकर के अपनी पत्नी के सहित सुन्दर रीति से बड़े सुशील दुल्हा श्री राम जी के कमल सदृश चरणों को धोकर एक लाख स्वर्ण मुद्रा दान किए उसी रीति से महाराज श्री चक्रवर्तिजी के अन्य पुत्रों के भी चरण धोए॥११॥

यथा क्रमन्तेन निवेशितानां शुभासने चाक्षत पुष्पमाल्यैः ॥
चचार पूजां चतुरास्य वाग्भि र्दीपैश्चतुर्भिश्चनीराजनैश्च ॥१२॥

उसके बाद महाराज उद्धत विक्रम जी ने श्री चक्रवर्ती जी तथा श्री राम जी आदि सबको क्रमशः सुन्दर आसनों पर बैठा करके अक्षत पुष्प माला आदिकों से तथा ब्रह्मा जी को वाणियों(वेदों) से पूजा करते हुए चार बत्तियों की आरती से नीराजन किया ॥१२॥

राजेतिचर्य्यां चरन्तूसलज्जयः सतूद्य चैतत्प्रकरोति सर्वम् ॥
बभूव तेनातितर प्रशंस्योऽयोध्याधिनाथेन महात्मभिश्च ॥१३॥

इस प्रकार राजाओं के योग्य समस्त कर्मों को सम्यक् प्रकार पूर्ण करते हुए महाराज उद्धत विक्रम जी बड़े संकोच में पड़े रहते हैं इस प्रकार अपनी कार्पण्यता पूर्वक पूजा करते हुए महाराज अयो-ध्या नाथ जी और सब महात्माओं ने अपनी सेवा रूप भक्ति सेवा रूप की बड़ा प्रशंसा की ॥१३॥

वेदीं परिस्कृत्य हुतासनंच मूर्तीन् ग्रहाणां तुयथार्ह वर्णैः ॥
विधाय वेद्याः परितः पुरोधास्तदानृपस्योद्धत विक्रमस्य ॥१४॥

इसके बाद महाराज उद्धत विक्रम जी के उपरोहित ने सुन्दर वेदी की रचना करके हवन किया नव ग्रहों की मूर्तियों को यथार्थ रंगों से उचित विधान पूर्वक पूजन किया और वेदिका के चारों तरफ अन्य वेदिकाओं पर स्थापन किया ॥१४॥

संप्रेरयामास वधू र्वरं च ततो वशिष्ठेन वरः प्रयोजितः ॥
रामस्तु नाम्ना रविवंश भास्वा न्पौत्र स्त्वजस्येति वचो ब्रवीत्स॥१५॥

तत्पश्चात कन्याओं को बुलवाया गया और श्री वशिष्ठजी ने वर की तरफ से विधान किया इस तरह से वर वधुओं का समागम विधि हुई। ब्राह्मणों ने वर के लिए साखोचार पूर्वक नाम से जो श्रीराम हैं जो सूर्य वंश में प्रकाश करते हैं परम्परा से महाराज अज जी के जो पौत्र हैं इस प्रकार संकल्प पूर्वक ॥१५॥

कान्तानां मधुर स्वरस्य परितो जाते च वेद ध्वनौ,
वाद्यानां च दिगन्त सं प्रसरिते संखादिना सुच्चकैः ॥
दत्तं चोद्धत विक्रमेण विनयै रत्नैः सुवर्णैस्तथा,
कन्यारत्न मनोहरं गुणगणै रामाय रत्नांचितम्॥१६॥

चारों तरफ से पुर की स्त्रियों के मधुर मङ्गलमयी गान पूर्वक तथा वेद ध्वनि तथा विविध प्रकार के शंखादिक बाजाओं की ध्वनि दशों दिशाओं को गुञ्जित कर रही हैं इस मङ्गलमयी आनन्द ध्वनि के मध्य महाराज उद्धत विक्रम जी ने बड़ी नम्रता पूर्वक महान रत्न और स्वर्ण के साथ मनोहर उत्तम गुण वाली कन्या रूप रत्नों को भी रत्न जटित सुन्दर वस्त्रभूषणों से सुसज्जित करके श्र राम जी के लिए अर्पण किया ॥१६॥

श्रीमद्दशरथस्याग्रे बिनीतः स च पार्थिवः ॥
यद्यद्देयं सुदाये वै पुत्रीणां श्रद्धया हितम् ॥१७॥

उसके बाद चक्रवर्ती महाराज श्री दशरथ जी के आगे बड़ी नम्रता पूर्वक खड़े होकर के प्रार्थना किया कि महाराज सुन्दर दामाद के लिए उत्तम पुत्रियों के साथ बड़ी श्रद्धा पूर्वक जो कुछ देने योग्य था वह अपने स्वरूपानुसार मैंने दिया ॥१७॥

निवेद्य च स नम्रो सावुवाच वचनं वरम् ॥
वध्वांजली मनन्त श्री महाराज वदन्निति ॥१८॥

इस प्रकार बड़ी नम्रता से सब कुछ समर्पण करने के बाद फिर हाथ जोड़ करके महाराज चक्रवर्ती जी को हे महाराज ! ऐसा कह करके ॥१८॥

यथां वुदां बुधेर्वारि वर्षत्यादाय चां बुधौ ॥
नह्यू न त्वं तदा दाने न वृद्धिस्तस्य वर्षणात ॥१६॥

जिस तरह से मेघ समुद्र से ही जल लेकर के फिर समुद्र में ही बरसाते हैं इस प्रकार मेघों के बरषने से न तो समुद्र में न्यूनता आती है और न समुद्र में वृद्धि होती है इसी प्रकार मेरा दान है ॥१६॥

तथेदं स्वीय मे वाद्यः स्वी कुरुष्व कृपानिधे ॥
भवत्सु पूजनं योग्यं दीपनैव दिवस्पते ॥२०॥

हे कृपानिधे ! इसी प्रकार यह आपका ही धन आपको स्वीकार होवै जैसे कोई सूर्य को दीपक से पूजा करता है इसी प्रकार ,आप सुन्दर पूजा करने योग्य हैं ॥२०॥

त्वांलभ्य राजेन्द्र परत्व मुच्चैः सम्बन्धिनं मे जगतां विधाता ॥
भागस्य सं भावयितुं नशक्तो लोकैक नाथं ललितं गुणैश्च॥२१॥

हे राज राजेन्द्र ! सम्पूर्ण लोकों के एक नाथ ! तथा सुन्दर ललित गुणों की खानि परम उच्च तम आप समस्त जगत के विधाता को सम्बन्धी पाकर के अब मेरे भाग्य की प्रशंसा जगत का विधाता भी सम्यक् प्रकार कहने को समर्थ नहीं है ॥२१॥

यद्यच्छुभं मुनिवरैः श्रुतिभिः प्रदिष्टं,

ज्ञानं ततोधिक विलक्षण मात्मनश्च ॥

तच्चोप लब्धि रपि पूर्व फलैर्विहीना,

सम्बन्ध तो फलित भावयतां भवं तः ॥२२॥

वेदों ने और मुनियों ने जो जो उत्तम श्रेष्ठ शुभ ज्ञान को वर्णन किया उससे भी अधिक बिलक्षण आत्मा आनन्द की उपलब्धि आपके सम्बन्ध की भावना करने से हमको सुन्दर तरह फलित हुई जो पूर्व फलों (सांसारिक कामनाओं) से रहित है ॥२२॥

को नोच्च तां व्रजति संश्रय मुच्च माप्य लोके प्रसिद्ध गतिराद्रित सज्जनानाम् ॥

वायूद्धूता कनक चित्र मनोग्य दण्डं, यद्रेणवोपि निवसन्ति नृपात पत्रम् ॥२३॥

ऊँचे आश्रय को पाकर के कौन उच्चता को नहीं प्राप्त हुआ ? लोक में सज्जनों से आदर किए हुए की गति यह प्रसिद्ध ही है कि वायु के द्वारा उड़ा हुआ धूल स्वर्ण के चित्र विचित्र मन रमणीय दण्ड वाले राजाओं के छत्र पर निवास करता है॥२३॥

इत्थं सुनम्रस्य नृपाधिराजा श्रुत्वा वचां स्युद्धत विक्रमस्य॥

तन्नम्र भावातितरां प्रसन्न उवाच वाचं सुखदां वचोज्ञः॥२४॥

इस प्रकार बड़ी नम्रता पूर्वक वचन महाराज चक्रवर्ती जी ने जब सुने तो उद्धत विक्रम जी की नम्र भावना पर अतिशय प्रसन्न होकर के शब्द को समझने वाले महाराज अत्यन्त सुखदायी मन रमणीय वचन बोले ॥२४॥

नो दीप्यते विविध भूषण भूषितेन नो दीप्यते गज रथाश्वक वाहनैश्च ॥

सन्नम्रता पुरुष भूषणमस्ति नूनं नील स्थलेभ इव सर्व गुणांहि यस्याम् ॥२५॥

हे राजन ! विविध प्रकार के भूषणों से कोई प्रकाशमान् नहीं होता तथा विविध प्रकार के हाथी घोड़ा रथ वाहन आदि महान् सम्पत्तियों से कोई प्रकाशमान् नहीं होता सत्पुरुषों के लिए सुन्दर नम्रता ही सुन्दर भूषण है जिस तरह से नीच स्थान में स्थित होने से जल सब गुणों से सम्पन्न होजाता है (उसी तरह से नम्र पुरुषों में सभी गुण आजाते हैं) ॥२५॥

तद्भूषितानां तु शिरोमणि स्त्वं यशोभिराजन्म सुदीप्य तेद्यः ॥

गुणैः प्रकृत्या नर भूषणत्वं प्राप्तोसि भूपाल मणे महत्वम् ॥२६॥

हे राजन उस नम्रता रूप भूषण पहिनने वालों में आप शिरोमणि हैं जो जन्म सिद्ध नम्रता आप में यह प्रकाश कर रही है इसलिए आप सहज स्वभाव से सन्तों के सद्गुण रूप भूषणों से भूषित हैं हे राजाओं में उत्तम ! आप सुन्दर राज महत्व को पाए हुए हैं ॥२६॥

इत्थं सुवचनैः श्री मत्कौशलेन्द्रेण मोदितः ॥

प्रतिज्ञान पूजयित्वा तु याचकान्प्रति पाद्य च ॥२७॥

इस प्रकार श्री मत्कौशलेन्द्र जी ने सुन्दर वचनों से उद्धत विक्रम जी को आनन्दित किया उसके बाद दान की प्रतीक्षा करने वाले याचकों को भी सम्यक प्रकार पूजित करके सबको प्रसन्न किया ॥२७॥

विशष्ठानु ज्ञापितश्च भ्रातृभिः सहितो महान् ॥
अविज्ञात श्रमानन्दो निशीथे मन्दिरं ययौ ॥२८॥

उसके बाद महाराज श्री वशिष्ठ जी की आज्ञा से माताओं के सहित महाराज उद्धत विक्रम जी अपने रात्रि शयन मन्दिर में गए आप इतने आनन्द मग्न थे कि अपनी मेहनत की थकावट का भी आपको पता नहीं था ॥२८॥

ततो विशेष विधिना तेन ह्यादत भावतः ॥
गृहाण राम तडागोर्मी स्पृशा शिशिर मारुतैः ॥२६॥

दूसरे दिन सुन्दर भाव पूर्वक बड़े आदर के साथ विशेष विधियों से महाराज उद्धत विक्रम जी ने नव रत्न भूषण रूप नवग्रहों से सुशोभित श्री राम जी रूपी अमृत भरे सरोवर की लहरों में शिशिर ऋतु के वायु का स्पर्श किया ॥२६॥

प्रसून द्रुम संश्लेषा दतोव घ्राण तर्प्पणे ॥
वातायना त्प्रवर्न्ते च सुख स्पर्श मनोहरे ॥३०॥

और सुन्दर फूलों से भरे हुए वृक्षों के स्पर्श से नासिका को तृप्त करने वाला वायु छज्जाओं से आकर मनोहर सुख स्पर्श करता है ॥३०॥

गृहे काञ्चन पीठे तु निवेश्य विनयात्किल ॥
चतुर्विधं रसैः षड्भिरकारि रुच्य भोजनम् ॥३१॥

इस प्रकार के घर में स्वर्ण के सिंहासन पर बड़ी नम्रता पूर्वक श्री राम जी को उद्धत विक्रम जी ने बैठाया और भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, पेय चार प्रकार के कणुआ, तीखा, मीठा, कसैला, खट्टा, नमकीन ये छः रसों के हजारों प्रकार के व्यंजनों को सुन्दर रुचिकर भोजन कराया ॥३१॥

महार्हस्तरणे चित्रे सौरभ्यांचित भित्तिके ॥
भोजनोत्तर मन्ये तु निवेश्य मन्दिरां तरे ॥३८॥

उस भोजन के बाद चित्र विचित्र रचना से युक्त चित्रसारी में सुन्दर सुगन्धियों से सुगन्धित बिसकीमतीय महान् चित्रित वस्त्रों से बिछे हुए बिछावन पर अपने महल के अन्दर श्री राम जी को शयन कराया ॥३२॥

ताम्बूल पुष्प हारैश्च मनोज्ञैर्घ्राण तर्प्पणैः ॥
दिव्यां सुकै रुत्तरीयै र्महात्मानः समन्ततः ॥३३॥

और पान देकर फूलों की माला पहिना कर नाक को तृप्त करने वाले मन रमणीय अतरादिकों को सूंघाकर उत्तरीय दिव्यवस्त्र को उढ़ाकर चारो तरफ से महान् आत्मा अनुरागमयी हृदय वाली सखियों के गीत विनोद पूर्वक सुनते हुए शयन किए ॥३३॥

दक्षिणाभिश्च तद्योग्यानतेन शिरसा तदा ॥
पूजिता भाविता राज्ञा विक्रमोद्धत केन वै ॥३४॥

इस प्रकार महाराज उद्धत विक्रम जी ने यथा योग्य दक्षिणादिक विधान पूर्वक नम्र सिर होकर के सबकी पूजा की और इस प्रकार शयन को प्राप्त हो गए ॥३४॥

प्रातः सम्बन्धिनातेन पुनः स्वात्म समो महान् ॥
प्रस्थानाभिमुखं श्रीमत्कौशलेशं विशेषतः ॥३५॥

महाराज कोसलेश जी के सम्बन्धी ने अपने महान् प्रतापशाली उद्धत विक्रम जी ने प्रातःकाल महाराज कोशलेश जी को आज प्रस्थान का दिन है ऐसा जान करके विशेष स्वागत् नम्रता पूर्वक किया ॥३५॥

विनयित्वाहि स गुरुं बहुशो नतिभि स्तदा ॥
स्वास्थायितुं सखा शिष्यं विसृष्टः स समागतः ॥३६

इसी प्रकार महाराज श्री वसिष्ठ जी को भी गुरु बुद्धि से नमस्कार करके विशेष विनय किया। इतने में ही महाराज श्री उद्धत विक्रम जी के सखा ने शीघ्र आकर चलने को सम्यक् प्रकार तैयारी किये हुए ॥३६॥

तदादतस्तो प्रणम्य यथाकारं कृतांजलिः ॥
उवाच शिरसा नम्रो विक्रमोद्धत वाचिकम् ॥३७॥

श्री अवधेश महाराज के लिए अपने महारज उद्धत विक्रम की कही हुई बात बड़ी नम्र शिर होकर कहा ॥३७॥

देवास्माकं तदीच्छायंशाकाशनं तथा विधम् ॥
द्वान्हांगीकार माश्रित्य दर्शनं देहि दुर्ल्लभम् ॥३८॥

हे देव ? आपकी चलने की इच्छा के अन्दर हम लोगों की इच्छा भी स्वीकार करते हुए दो दिन शाक का भोजन करके अपना दुर्लभ दर्शन दीजिए ॥३८॥

अथैतद्वचनं श्रूय तस्य प्रेमरस प्लुतम् ॥
सुमन्तोऽपि मधुस्फीतै रुवाच वर्णैः शुभैः ॥३९॥

इसके बाद प्रेमरस से भींजे हुए उन उद्धत विक्रम जी के सखा की भी बातों को सुनकर बड़े मधुर और साफ सुन्दर वाणींसे श्री सुमंत्र जी भी बोले ॥३९॥

न शक्ता भवतां प्रेम्णः पारं गतुं सरित्पतेः ॥
वयं चा तिथ्य मश्नन्तो बहूनां प्रेम संग्रहैः ॥४०॥

हम लोग आप लोगों के प्रेम समुद्र से पार होने के लिए असमर्थ हैं आप लोगों के अतिशय स्नेह समूह से महान् अतिथ्य का भोग करते हुए बहुत दिन हो गये ॥४०

परं त्व न नुरोधेन भवतां गंन्तुं नोत्सहे ॥
यत्कार्य्याकार्य्य संप्राप्तिस्तत्समात्तू भयोरपि ॥४१॥

परन्तु आपके इस प्रकार के अनुरोध से हम लोग जाने की हिम्मत नहीं कर सकते। अब क्या कर्तव्य है क्या नहीं कर्त्तव्य है इस विषय में दोनों तरफ विचार होना चाहिए॥४१॥

सुमन्त वाचं श्रुत वोध शीघ्रां सम्बधिनः प्रीति लताम्बुधारात ॥
श्रुत्वा समुत्साह मनाः स्वनाथं ययौ प्रणम्याथ नृपाधि नाथम् ॥४२॥

कानों को शीघ्र बोध देने वाले श्री सुमंत्र जी की वाणी परस्पर सम्बन्ध की प्रेमलता को सींचने वाले अमृत धारा के सदृश सुनकरके अतिशय उत्साहित मन होकर श्री उद्धत विक्रम जी के सखा महाराज अवधेश जी को प्रणाम करके अपने नाथ के पास गए ॥४२॥

सता मथा श्रूयसता प्रणीतां महामनाः चोद्धत विक्रमोसौ ॥
रामं समाव्हाहितुमश्व बृन्दै नियाय नागं सविमान शोभम् ।४३॥
पादाङ्गदाङ्गद किरीट कुण्डलैश्च माल्योर्म्मिकादि वहु भूषण भूषितो सौ ॥
तस्यानुराग मिव चोद्धत विक्रमस्य मातङ्ग मुन्नत तरं हितमारुरोह ॥४४॥

महामनस्वी उद्धत विक्रम जी ने अपने सखा के मुख से सुन्दर साधुता पूर्वक उत्तर के शब्दों को सुनकर श्री राम जी को बुलवा करके बहुत से घोड़ा हाथी सेना सजावट पूर्वक एक हाथी के ऊँचे महान् शोभायमान विमान को सजाकर और श्री रघुनाथ जी के कीट कुण्ठल विविध प्रकार के मालादिक शोभाओं की लहर तथा पदहात्र विजायठ कंकणादि भूषणों से सुन्दर भूषित हुए मानो साक्षात् उद्धत विक्रम जी के अनुराग ही मूर्तिरूप धारण किए हों इस प्रकार के बहुत ऊँचे उस हाथी पर श्री राम जी सवार हो गए ॥४३-४४॥

अथानकान्मेघ विलंघि निश्वनानाक्रम्यगच्छत्सुदिगन्त दूरतः ॥
संकाश्यं वीणोच्च रवेषु वन्दिर्ना जगाम रामः श्वसुरस्य मन्दिरम् ॥४५॥

मेघ की आवाज का उल्लंघन करने वाले बहुत बड़े दुन्दुभी के नाद दिशाओं को शब्द से भरते हुए और अनेक प्रकार के झाँझ वीणा वेणु आदिक बाजाओं के गुंजार पूर्वक वंदियों के प्रार्थना श्री राम जी अपमे श्वसुर के मन्दिर में गए ॥४५॥

पुरागममश्रूय वरस्य तावत्पुरांगणा पुण्य पुरा कृतस्य ।
फलो दयस्त्वद्य इति प्रतीत्या का सोच्च वातायन संनिविश्य ॥४६॥

पूर्व जन्म के महान् पुण्य मे प्रकाशवतो नगर की समस्त अंगनाओं ने दुल्हा श्री राम जी नगर में आरहे हैं ऐसा सुनकर हमारे पुराने पुण्यों का फल उदय हो गया ऐसा निश्चय करके अनूप गगन-चुम्बी महलों के ऊँचे छज्जाओं पर चढ़ करके ॥४६॥

उत्क्षिप्य मुक्ता फल जाल रंध्रान्स्थिताश्च तस्यां दिशियो जिताक्षयः ॥
हस्ते समादाय नीराजनार्थं काश्चित् स्थिताः काञ्चन भाजनं च ॥४७॥

दुल्हा श्री राम जी की तरफ दृष्टि को फैलाकर अपने महलों के छज्जाओं पर से तथा बहुत सी जाली वाली खिड़कियोंमें खड़ी होकर मुक्ता मणियोंको न्यौछावर करके बरषा रही हैं और हाथों में कोई आरती का सामान लिए हुए कोई स्वर्ण थालों को मंगलसाजों से सजे हुए लिए हुए हैं ॥४७॥

गायन्ति गीतानि मनोहर स्वरैः सम्बन्ध युक्ता रस व द्विशेषणैः ॥
नामानि संयोज्य परस्परं मुदा तान्ये व रामः श्रुतवान्सहर्षितः ॥४८॥

मनोहर स्वरों अनेक प्रकार के गीतों को गा रही हैं। सम्बन्ध के अनुसार रसीले भाव युत शब्दामृत की वर्षा कर रही हैं अपने और दुल्हा के पक्ष के नर नारियों का नाम योजित करके अनेक प्रकार के विनोद की बातों को उच्चारण करते हुए सुनकर श्री राम जी अतिशय हर्षित होते हैं ॥४८॥

रथ्या सुयोषि हृदये च रामः समं विवेशांग महनोरत्वात् ॥
स्थितागवाक्षे वर भूषणाङ्गा मूर्तिर्मणीना मि व कृत्रिमा च ॥४६॥

अतिशय मनोहर अंग होने से श्री राम जी गलियो से ही उन स्त्रियों के हृदय में सम्यक प्रकार प्रवेश कर जाते हैं। सुन्दर भूषणों से भूषित अंग वाली वे समस्त नगर की उत्तम स्त्रियाऐं अपने महलों केछज्जाओं पर विराजी हुई मणिमय कृत्रिम मूर्ति की तरह से हो गयीं ॥४६॥

पूर्वं तु कोलाहल मुच्चशब्दं ततो जनानां वहुशश्च यूथाः ॥
ततस्तु वाद्यादि क्रमेण वाहास्ततस्तदा रूढ समग्र वीराः । ५०॥

सबसे आगे पहले अनेक प्रकार के शब्दों से कोलाहल मचाते हुए झुण्ड के झुण्ड जनों की बहुत भोड़ सुशोभित है उसके बाद अनेक प्रकार के बाजाओं के क्रम से लाइन लगी हुई इसके बाद अनेक प्रकार की सवारियाँ जिनमें बड़े बलवान समग्र वीर लोग चढ़े हुए थे ॥५०॥

तेषांतु मध्ये चल दद्रिशा नौ रथेन भानुः किरणैः प्रकीर्णः ॥
तथोच्च नागे म विमानके सौविवाह भूषांगवभौच रामः ॥५१॥

इस प्रकार बड़ी भारी चलती हुई बरात के मध्य में पर्वत के समान ऊँचे हाथी पर सैकड़ों सूर्यों क समान प्रकाश करते हुए विमान में विवाह के भूषणोंसे सुसज्जित श्री राम जी महान् सूर्य की तरह से प्रकाश कर रहे हैं॥५१॥

याभिस्तु रामस्य मुखं मनोज्ञं निरीक्षितं पौर वरांगणाभिः ॥
तासां मनो नेत्र मयानि तेन हृतानि रत्नानि गवाक्ष जालात् ॥५२॥

जिस वराङ्गना ने मन रमणीय श्री राम जी के मुख चन्द्र को देख लिया उसके मन और नेत्र रूप रत्नों को श्री राम जी ने छज्जाओं और झरोखाओं के रास्ते से चुरा लिया ॥५२॥

इति प्रकाशं सुखमाति रेकान्मनो भवस्योद्भिदयौवन श्रीः ॥
पुरांगणानां हृदि दर्शनेन कुर्वन्सुकेतुं कनकोच्च कुम्भम्॥५३॥

सुषमा की अतिशयता से उदय होते हुए यौवन की भी मनोभव (कामदेव) के अतिशय प्रकाश को नगर स्त्रियों के हृदय में दर्शन होने से वह सुषमा के मन्दिर का वक्षस्थल स्वर्ण के उच्च कलश हैं और वे युवतियाँ स्वयं ध्वजा की तरह से प्रकाश कर रही हैं ॥५३॥

प्राप्तं पताकाभिरशेष चित्रैः प्राकार भित्या परितः सुदीप्तम् ॥
वाद्य प्रतिध्वान सुनादितं तत्प्रासादमाप्तः श्वसुरस्य रामः॥५४॥

इस प्रकार नगर में कौतुक करते हुए श्री राम जी श्वसुर के घर में पहुँच गए जो श्वसुर का घर अनन्त प्रकार के चित्र विचित्र पताकाओं से और प्रकाशमान दीवालों पर चारों तरफ से अनेक प्रकार के चित्रों से और विविध प्रकार के बाजाओं के नाद से प्रति ध्वनित अतिशय शोभा संयुक्त हैं ॥५४॥

नवारविन्दाक्ष दर स्मिताधरं पर्व्वेंदु पूर्णादधि कांचितानमम्॥
समोन्नतांशं च विशाल वक्षमंलाक्षा रसारक्त करांघ्रि सत्तलम् ॥५५॥

श्वसुर के घर की स्वागत के लिए आयी हुई उत्तम स्त्रियों ने अपने राज महल के दरवाजे पर से नवीन कमल के समान खिले हुए नेत्र वाले मन्द मुसुक्यान से रँगे हुए अधर वाले शरद पूर्ण चन्द्र से भी अधिक प्रकाशमान मुख चन्द्र वाले ऊँचे विशाल कपाट समान वक्षस्थल वाले लाक्षा के रंग से रँगे हुएकर चरण वाले दुल्हा श्री राम जी का दर्शन करके ॥५५॥

तमेत्य नीराजितु मङ्गनानां प्रभा मणी नामिव संस्थितानाम् ॥
सर्वेंद्रियं सत्पारि वर्ज्जयित्वा चैतन्य भावं नयनेष्वदृश्यत् ॥५६

सबकी सब अङ्गनाऐं इकट्ठी होकर आरती के लिए सजे हुए मंगल थारों के सहित मणिमय भूषणादिकों से प्रकाशमान सबकी सब अङ्गनाऐं समस्त इन्द्रियों के व्यापारों को छोड़ करके केवल नेत्रों में चैतन्य भावों को लिए हुए दीख पड़ती हैं ॥५६॥

तं नीराज्य नवाम्बुदाभ रुचिरं कौसुंभ्य सत्कंचुकं
मुक्तागुम्फित सोतरीय विलश त्साम्योन्नतांश द्वयम् ॥
प्रासादान्तर मेत्यरत्न खचिते सिंहासने स्थाप्य च
श्वश्रूभिश्च वधूगणैरिवधनं विद्यु द्गणै र्योजितः॥५७

नवीन मेघ सदृश प्रकाशमान अत्यन्त रुचिकर कुसुमी रंग के कंकुक को पहिने हुए मुक्ताओं से गुम्फित एक उत्तरीय बस्त्र को ओढ़े हुये समान उन्नत दोनों कन्धाओं से सुशोभित श्रीरामजी को देखकर के आरती किये फिर महल के अन्दर रत्न खचित सिंहासन में बैठाकर सासुयें तथा अन्य वधूगणों के सहित सासुयें दुल्हा को घेरी हुई सुशोभित होती हैं जैसे बिजलियों का समूह मेघ को घेरा हो ॥५७॥

विधाय चैकारघुराज सूनो रासे दुषो रत्न सदासनं च ॥
श्वश्रूः प्रवेकांजलि मग्रतश्च वचो ब्रवीत्कारुणिकं मनोज्ञम् ॥५८॥

रत्नों से जड़ित सुन्दर सिंहासनों पर बैठे हुए रघुराज कुमार के लिए अनेक प्रकार स्वागत सत्कारों को करके सासु हाथ जोड़ी हुई श्री राम जी के आगे में खड़ी होकर मन रमणीय अत्यन्त करुणा से भरे शब्दों से बोलीं ॥५८॥

पुत्र्यास्त्विमा मे स्वकरेण लालिताः सर्वास्त्वदर्थं बिधिनापि निर्मिताः ॥
ग्रहणीय मा सां प्रियताधि कृत्यं कैंङ्कर्य्यं भावं भवता कृपालुना ।५९॥

हे राम! इन अपने हाथों से लाड़ प्यार से पाली हुई समस्त कन्याओं को मैंने आपके लिए विधान पूर्वक अर्पित कर दिया है जो विधाता से निर्मिता इन कन्याओं के अत्यन्त प्रियतापूर्वक कैंकर्य भावों को परम कृपालु आप से गृहण करने योग्य हैं ॥५९॥

योग्योसि शिक्षन्नु त्वपराध ह्यासां त्वय्येकतानत्व विधायिनी नाम् ॥
येषांत्व देका गतिरस्ति लोकेंते रक्षणी यास्तु त्वया विशेषम् ॥६०

और आप इनके अपराधों को क्षमा करने योग्य हैं क्योंकि इनकी एकमात्र गति लोक में आप ही हैं इससे आपसे विशेष करके रक्षा करने योग्य हैं और इनकी बुद्धि भी एकरस आपही में लगी रहने वाली हैं ॥६०॥

श्वश्रूक्तं वचनं निसम्य नितरां नीत्या सलज्जे क्षणः
प्रोवाचाम्बुज पत्र दीर्घ नयनौ बोधाप्तना न्वोधितुम् ॥
मातर्मां प्रति पुत्रवन्ममतया सं वर्द्धनीयः सदा,
श्नेहःसान्त रतोपि वारि वसती वांडे शुचिः कूर्म्मिका॥६१॥

सासु के कहे हुए इस प्रकार अतिशय नीति युक्त बचनों को लज्जा युक्त नम्र दृष्टि से सुनते हुए कमल दल के समान लिशाल नेत्र वाले सम्यक्र प्रकार बोध के घर सासु को सुबोधित करने के लिए बोले–हे माना ! मेरे को पुत्र की तरह से ममता करके आप अपने स्नेह को हमेशा बढ़ाइये जिस तरह से कछुआ जल के अन्दर अपने अण्डों से बहुत दूर रहने पर भी अपने पवित्र स्नेह को याद करके ही अण्डों का पालन करता है उसी तरह से आप मेरी याद किया करें ॥६१॥

गन्तुं सज्जित पद्मि नास गुरुणानुज्ञां प्रति प्रार्थ्थितुं
युष्माकं सविधं स्वयं स्वगुरुणा नीतो स्म्यहं सद्यवै ॥
इत्युक्त्वा प्रणयात्सु नम्र वदनेनानेन चेत्संस्थिते
श्वश्रूभि श्र्वद श्रुभिः सुनयनैः सं वीक्षितेनस्थिते ॥

और मेरे गुरू महाराजने शीघ्र चलने के लिए हाथी को तैयार कर रक्खा है और गुरुमहाराज की आज्ञा से मैं आप सबके सुन्दर विधान पूर्वक प्रार्थना करके आज्ञा लेने आया हूँ। इस प्रकार कह करके इस नम्र मुख चन्द्र से खड़े हुए श्री राम जो को प्रणय कीअतिशयता से अपने सुन्दर नेत्रों से अश्रुओं की धारा बहाते हुए खड़ी हुई सासुएँ आपको देख रहीं हैं ॥६२॥

अथोभय त्रैव निरोधितां यां भरेण प्रेम्णः पर वाक्यवृतौ।
नीत्वा विशेषेण सुवासिनी भिर्वधूवरौद्वार वहिंप्रदेशम्। ६३

प्रेम के भार से बँधे हुए दोनों तरफ गुरू महाराज के वजन से परवस होकर मौन हैं और सुवासिनी सब बर बधुओं को विशेष विधान पूर्वक विदाई का इन्जाम करके अपने महल के बाहरी भाग में लाए ॥६३॥

नीतौ तदामंगल गान वाद्यै र्वधूस्तु सर्वाश्चतुरस्रवाह्यैः ॥
वरः समारुह्य जनं समुच्चं जाते जनैः कृत्य कोलाहलोच्चै ।६४॥

जिस पालकियों में चारों कोना पर ढोने वाले वाहक लगे हैं ऐसी सुन्दर पालकियों में माङ्गलिक गीत वाद्य विधान पूर्वक बधुओं को बैठाकरके उसके बाद जनता के ऊँचे माङ्गलिक कोलाहल संयुक्त दुल्हा भी हाथी पर चढ़े ॥६४॥

मण्डलै रिव दोपानां तुण्डे र्व्यप्पित पक्षिणाम् ॥
पश्यतां भ्रम मापन्नं द्वितीयं चोडु मण्डलम् ॥६५॥

आकाश में पक्षियों की चोंचों द्वारा दीपों का मण्डल बाँध करके बरात सजायी गयी। यह आकाश दीपों की शोभा दर्शकों को यह दूसरे तारा मण्डलों हैं ऐसा भ्रम हो रहा है ॥६५॥

वेषान्बहू न्समाकल्प्य जनानां विस्मयं कराः ॥
चेष्ट यन्ति समाजेषु विदुषाः तर्क्क पण्डिताः ।.६६।।

बरात में सबके मन को प्रसन्न करने के लिए बड़ी तार्किक बुद्धि वाले विदूषक लोग विविध प्रकार के वेषों की सुन्दर कल्पना करके जनता को आश्चर्य पैदा कर रहे हैं ॥६६॥

नर्त्तयन्ति विमानेषु रूपवत्यो वराङ्गणाः ॥
दर्शयन्त्यो नुभावाश्च भूषिताः सर्वं भूषणैः ॥६७॥

कहारों के कन्धाओं पर बाँसो पर बने हुए विमानों में सर्वभूषणों से भूषिता उत्तम रूपवती अप्सराऐं विविध प्रकार के नृत्य गान संगीत करके अनेकन अनुभावों को दिखाती है ॥६७॥

जनै र्वाह्याशिरोभिश्च र्दीपान्तर चकाशिताः ॥
मणीनां कृत्रिमा रम्या वाटिकाश्च मनोहराः ॥६८।

और मणियों के फूल फल पत्र बृक्षलताओं की कृत्रिम रचना करके वाहकों के सिरों द्वारा ढुआ करके मनोहर वाटिका की कल्पना की गई है जिस वाटिक में विविध प्रकार रत्नदीपों का प्रकाश छाया हुआ है ॥६८॥

स्फुलिङ्ग कौतुकाश्चित्रं दर्शयन्ति त्वनेकधाः ॥
दण्ड खेला श्चासि खेला उण्डीन कलयान्विताः ।६९॥

और अनेक प्रकार के आतशबाजियों द्वारा अभ्दुत कौतुक अनेक खेल दिखाए गये तथा दण्डों का खेल, तलवार का खेल, कूद फान कलाबाजी का खेल अनेक दिखाए गए ॥६९॥

द्वाराग्र सद्भासित मङ्गलाङ्गै दीपावली द्योतित हेम कुम्भैः ॥
उच्चैः प्रजानां भवनै प्रकीर्णा मि त्थं विनोदा कलिते जनानाम् ॥७०॥

इस प्रकार महाराज उद्धतविक्रम जी ने राजमहल के बाहरी फाटक के आगे अनेक प्रकार के माङ्गलिक दीपावली स्वर्णकलश आदि मंगल अंगों से प्रकाशमान इस कौतुक को आस पास का जनता के ऊँचे महलों पर से दर्शकों की भीड़ इस महाविनोद को देख रही हैं ॥७०॥

रथ्यां परिभ्राम्य वधू चनैश्च राम स्तदा शूद्धतविक्रमेण ॥
प्रजा जनै मर्हाभ्द नींतो निवासे वर यान कास्य ॥७१॥

इस प्रकार गलियों में वधूजनों से घिरे हुए श्री उद्धत विक्रम जी के सहित और प्रजाजन बन्धु वर्ग महानों के सहित घिरे हुए श्री राम जी इस महा कौतुक उत्सव पूर्वक जनवासे में आए ॥७१॥

तैरेव सैन्यैश्च, महद्भिःराजा मार्गे त्रिरात्रं तमनुव्रजित्वा ॥
दासांश्च दासींश्च तथैव सेनां नियोज्य देवंत्वपरं सुदाये ॥७२॥

और जनवासे से भी बरात को विदा करके उसी धुम धाम के साथ तीन दिन तक पीछे चल करके महाराज उद्धतविक्रम जी मार्ग में पहुँचाने को आए। और बहुत सी दास दासियों को महाराज अवधेस के लिए नियोजित करके तथा और भी बहुत सी सुन्दर वस्तुऐं सेना प्रिय दामाद के लिए देकर के ॥७२॥

सुवन्द्य वन्द्यानधिकं सुप्रीत्या श्री कोशलेशं च तथा वशिष्ठम् ॥
श्री राम रूपं हृदये दधानः समागम न्स्वात्म पुरं प्रसन्नः ॥७३॥

प्रणाम करने योग्यों को अतिशय प्रेम पूर्वक विधि से प्रणाम करके इसी प्रकार महाराज कोसलेश जी को और श्री वसिष्ठ जी को बार २ प्रणाम करके श्री राम जी के रूपको हृदय में धारण करके अतिशय प्रसन्न मन हुए श्री उद्धत विक्रम जी अपने घर लौट आए ॥७३॥

इति श्री शङ्कर कृते श्री अमर रामायणे श्री सीताराम रत्न मञ्जूषायां राज्ञो दाक्षिणास्य त्रिकमोद्धत स्यै कादश सहस्र कन्या नां श्री रामेणो द्वाहो नाम षष्टित्तमः सर्गः ॥६१॥

इति श्री मधुकर रूपरसास्वादिना कृता टीकायां राज्ञोदाक्षिणास्य विक्रमोद्धतस्यैकादश सहस्र कन्यानां श्री रामेणोद्वाहो नाम एकषष्टित्तमः सर्गः ॥६१॥

अथोद्धत विक्रमस्य सुता उद्वाह्य राघवः ॥
पित्रा स गुरुणा सैन्यै राजभिः सेवितेन सः ॥१॥

इस प्रकार पिता और गुरू महाराज तथा सेना व बहुत से राजाओं से सेवित श्री राघव जी महाराज उद्धत विक्रम जी की कन्याओं से विवाह करके लाए ॥१॥

उत्कण्ठितानामन्येषां कर ग्राहितु मात्मना ॥
सुतानां विधिना राज्ञां पुरं याने जगाम च ॥२॥

और भी बहुत से राजा अपनी कन्याओं से विधान पूर्वक श्री राम जी के पाणिग्रहण कराने की उत्कण्ठा में आशा लगाए थे। श्री राम जी इसी प्रकार बरात संयुक्त सवारियों से गये॥२॥

यानोहितः सुप्रतराहि मार्गास्ताश्चापि सैन्याग्ररथाश्च नागैः ।
कुर्वन्त गाधा अपि जानु दघ्नाध्वनीः स सं बंधिन आपसीमाम् ॥३॥

जो मार्ग जहाज और नावों से पार किए जाते थे उन मार्गों को हाथी घोड़ा रथ पदाति आदि बरात की भीड़ द्वारा गाध (पैदल चलने योग्य करके) तथा कहीं पर घुटना भर पानी हेलकर चलने लायक रास्ता बना दिए इस प्रकार अपने राज्य की और अपने सम्बन्धीयों के राज्य की सीमा को प्राप्त हो गये ॥ ३॥

ततो बृहद्वंश विलम्बितानां पंक्तिर्ध्वजानां विपिना वृतानां ॥
दृष्टा पुरोगै रिव मेघ जाले सोड्डीय माना बकराजि रासीत् ॥४॥

बड़े लम्बे बाँस वाले ध्वजाओं की पंक्ति जो सघन वनों के अन्दर आते हुए दूर से बरातियों का समाचार दे रही हैं तथा वंश दीपों की पंक्ति से विशाल बरात की अद्भुद शोभा दूर से दीख रही है। मार्ग में ग्रामीण जनता ने सघन वन के बीच में आता हुई बरात को सघन मेघ मण्डल के ऊपर बगुलाओं की पंक्ति सदृश आते हुए देखा ॥४॥

जवाङ्कुराढ्या न्वट मङ्गलार्थान्शिरो वहन्तीः प्रमदा जनाग्राः ॥
वाद्यैश्च गानैश्च ततः समूहा दृष्टा जनानां वर वाहनैश्च ॥५॥

रास्ते में बरातियों के स्वागत मंगल के लिए स्त्री गण अपने सिरों में रखकर जौ के अंकुर मंगल चिन्हों से चिन्हित कलश लिए हुए गाना बजाना समूह पूर्वक तथा बहुत से लोग सुन्दर सवारियों में बैठकर आए हैं ॥५॥

एतत्समालोक्य वरस्य पक्षे सम्बन्धिनः किं पुर मेत दासीत् ॥
वितर्कयन्तीति जनाः समेता स्तावच्छ्रुतं चाद्दतु मागतो सौ ।६॥

इस प्रकार मार्ग के दृश्य को देखकर वर पक्ष के बराती लोग अनुमान करने लगे कि कन्या पक्ष का नगर यही है इस प्रकार को तर्कना करते हुए आगे चलने पर बराती लोग आ गए ऐसा सुनकर ॥६॥

ग्रामाधिकारी नृप तुल्य गोपो मंत्री स एवास्ति परं च मित्रम् ॥
ताव त्सुगन्धान् जलयंत्रकै श्च सिञ्चन्त एवाग्र जनाः ससंयुः ।७॥

एक कुछ ग्रामों का अधिकारी गोप जो राजाओं के तुल्य है उसने अपने परम मित्र मंत्री को स्वागत के लिए आगे भेजा तब तक जल यंत्रों से सुगन्धित जल के सिंचाव पूर्वक मार्ग में बरात के आते हुए कुछ लोग दूत बनकर आगे आकर समाचार दिए ॥७॥

स आजि माश्लेषितु मुक्त चेता स्त्रिविष्टपस्याधि पते रधृष्यम् ॥
ऋजुः स्वभावो महतां तथापि आश्लिष्यतं तेन मु मोद गोपम् ॥८॥

वह गोपराज महाराज श्री अजनन्दन जी को आलिंगन करने के लिए आगे बढ़े सरल स्वभाव जो महाराज श्री चक्रवर्ति जी की इन्द्र भी धर्षणा नहीं कर सकता ऐसे महाराज बड़े सरल स्वभाव के साथ महान् महात्मा हैं उन महाराज ने उन गोपालराज को गले से लगाकर आलिंगन किया; अतिशय आनन्द हुआ ॥८॥

तदादृतो हर्ष मुपेत्य गोपो बद्धांजलिः सद्गिर मुच्चचार ॥
पतत्रि खर्वेण समो हमेत्र तार्क्ष्यो पमस्त्वं महतो महद्भिः ॥९॥

इस प्रकार महाराज से आदर पाए हुए गोपराज हाथ जोड़कर सुन्दर साधू वाणी से बोले कि मैं तो एक पतंगा के समान हूँ आप महान से भी महान् पक्षिराज विष्णु बाहन गरुड़ के समान हैं ॥९॥

कस्त्वं हिमांशुर्हि दिगन्तरस्मिः कः खर्व खद्योत समो हमेव ॥
वदन्ति विद्या विषयाभिपूर्णाः संवीक्ष्य मत्वा महदंतरेण ॥१०॥

कहाँ तो आप साक्षात् शरद पूर्णमासी के चन्द्रमा के सदृश सर्वलोक दिगंतरों को प्रकाश करने वाले कहाँ मैं एक तुच्छ जुग्नू के समान परन्तु विद्या विषय पारंगत हुए विद्वान लोग कहते है कि बड़े लोगों का यह महान् अन्तर होने पर भी छोटे लोगों से मिलना यह उनकी उदरता ही बड़प्पन है॥१०॥

सजानुलंव्यत्र चित भूषणाभ्या मालिंगितो हं भवता भुजभ्याम् ॥
गुणः सतां सद्भिरलं कृताना मङ्का गतिः स्यात्फलवद्द्रु माणाम् ॥११॥

सो अपने घुटना पर्यन्त लम्बी दिव्य मणियों की मालाओं से भूषित अपने श्री विग्रह दोनों भुजाओं से मेरे को आलिंगन किया यह सज्जनों के सद्गुण ही अलंकार रूप में अंग में शोभित होते हैं जैसे उत्तम फल वृक्षों पर सुशोभित होते हैं ॥११॥

इत्थं समाजै र्महतां समेतं तंसार्वभौमं प्रणिपत्य गोपः ॥
समर्च्य वाक्पुष्प च यैश्च रत्नै स्ते नाथ ग्रामान्त वनं विवेश ॥१२॥

इस प्रकार गोपराज के महान समाज के सहित उन महाराज सार्वभौम चक्रवर्ति जी को प्रणाम करके अपने वचन रूप पुष्पों से तथा उत्तम रत्नों से महाराज चक्रवर्ति जी को सन्यक प्रकार पूजा करके उस रास्ते में से अपने नगर पयन्र्त विस्तार वाले जंगल में महाराज श्री चक्रवर्ति जी के सहित प्रवेश किया ॥१२॥

नामानि जातिं च मृग द्रुमाणां घने वने हस्त पुट प्रयुक्तः ॥
विलक्षणानां कथयन्सराज्ञे तदोपशल्यं निकटं ह्युपेतः ॥१३॥

इस प्रकार बरात के सहित जाते हुए श्री चक्रवर्ति जी ने गोपराज से जंगल के वृक्ष और मृगाओं का तथा सघन वनों के नाम और जातियों को पूछते हुए घोर वन में प्रवेश कर रहे हैं साथ गोपराज अपने दोनों करकमलों की अञ्जलि बाँधकर विलक्षण रूप आकृति वाले वन मृग पक्षियों के नामों को महाराज चक्रवर्ति जी के लिए बताते हुए अपने ग्राम के समीप में आ पहुँचे ॥१३॥

पर्य्यङ्क-पीठासन संभृताना मन्योपचाराश्रित संग्रहाणाम् ॥
अथां सुकाप्यन्य समूहकानां विभक्त पंक्ति प्रवर प्रकीर्णे ॥१४॥

जहाँ पर बड़े २ महलों का समूह बस्त्रों से बना हुए पंक्ति की पंक्ति अलग २ विस्तार बने हैं जिन बस्त्रों के महलों में पर्यंक सिंहासन आदि सभी उपचार सामग्री सम्यक् प्रकार संग्रह करके सजायीं गयीं हैं ॥१४॥

श्रीरामयाना गमनं विचिन्त्य विरोपितेवास्त्र विशाल दुर्गे ॥
निवेश्य श्रीकौशल राज राजं मुमोद गोपः कृततत्प्रणामः ॥१५॥

और इस प्रकार के जनवासा के बाहरी भाग में बहुत विशाल वस्त्रों का परकोटा बना है इस प्रकार के जनवासा को श्री राम जी की बरात आवेगी इस विचार से पहले से तैयार रक्खा था सो उसी जनवासे में राजराजेश्वर महाराज श्री कोसलेश जू को बरात सहित ठहराकर तब गोपराज अत्यन्त आनन्द मग्न होकरके प्रणाम किए ॥१५॥

स्थिरं प्रसन्नं नितरां निरीक्ष्य प्रोवाच गोपः कर सन्पुटेन ॥
दिनैक मात्रं तु गृहे मदीये संप्रेषितुं देवसवन्धु रामम् ॥१६॥

जब महाराज बरात के सहित जनबासे में विराजे। सब प्रकार इन्तजाम होने के बाद चित्त स्थिर प्रसन्न मन हुए देखकर श्री गोपराज जी हाथ जोड़कर बोले-हे देव ? आप अपने बन्धु वर्ग तथा श्रीरामजीके सहित एक दिनके लिये मेरे घरमें ठहरनेका आज्ञादें उसके बाद मैं आपको विदा करूँगा ॥१६॥

आर्य्येण सार्द्धं हि सुमन्तकेन ससेवकं मङ्गल भूषणाङ्गम् ॥
प्रमोद कुत्रेव पुनः समाजैः समागमः स्यादति दूर देशात् ॥१७॥

आज कैसा सुन्दर मंगल का दिन है कि श्रीरामजी मांगलिक भूषणोंको अंगों में पहने हुए तथा सेवक सुमन्त आदिकों के तथा अपने पिताजीके साथ आये हुए हैं ऐसे मौका में यदि आपका स्वागत न

कर सकूं तो फिर ऐसा समय अति दूर देश होने की वजह से कहाँ मिलेगा इसलिए हे देव आप प्रसन्न होवें ॥१७॥

इत्थं प्रीति मतस्तस्य वचः श्रुत्वा विहंस्य च ॥
गोप्ता लोकस्य गोपस्य तथेत्युक्त' शुभं पुनः ॥१८॥

इस प्रकार श्रीगोपराज जो के अति अनुरागमयी बचनों को सुनकर समस्त लोकों के संरक्षक महाराज श्रीचक्रवर्ति जी हँस करके बोले कि ऐसा ही होगा ॥१८॥

तथेत्युक्ते महाराजे सेवकाः कार्य्यकारिणः ॥
चक्षुर्भाव विदा शीघ्रं सुमन्तेन च व्यापृताः ॥१९॥

महाराज की इस प्रकार की प्रार्थना स्वीकृति पर जितने भी कार्यकर्ता सेवकगण थे सबके सब नेत्रों के इशाराओं को समझाने वाले शीघ्र श्रीसुमन्त जी की आज्ञा से जैसे के तैसे ठहराये गये ॥१९॥

उच्च मातङ्ग मास्थाय हर्म्यस्थाणां स्व दर्शनम् ॥
सन्निकर्षं विधातुं तद्ग्रामाभिमुख मायर्यौ ॥२०॥

दुल्हा के नगर में प्रवेश करने के लिए बहुत ऊंचे हाथी को सुन्दर दर्शनीय श्रृङ्गार करके बैठाये और अपने को दर्शन की लालसा वाली ग्राम की स्त्रियों के दर्शन सुपास के लिए सुन्दर बरात के सहित गोपराज के घर जाने के लिये ग्राम के सन्मुख आये ॥२०॥

नीलेन्द्र रत्न परिभावित कान्तिकाय-
मुद्भिन्न यौवन वयः श्रियमम्बुजाक्षम् ॥
वासोरुणं परिदधान मपार शोभं-
नार्य्यश्चमत्कृति मवापुरवेक्ष्य रामम् ॥२१॥

ऊंचे हाथी पर बैठे हुये श्रीरामजी इन्द्र नील मणि के समान श्याम सुन्दर विविध प्रकार के सुन्दर भावों से श्रृङ्गार किये हुए प्रकाशमान शङ्ग वाले नवीन उत्पन्न हुये यौवन अवस्था वाले अतिशय शोभा से भरे हुए कज्जलित नेत्र वाले अरुण वस्त्रों को धारण किये हुये अपार शोभा सम्पन्न श्रीरामजी को पुरमें प्रवेश करते जब ग्रामकी स्त्रियोंने देखा तो अतियश चमत्कार वाले रूपको देखकरचकाचौंधा को प्राप्त होगये ॥२१॥

झटितं चाप्यधो गेहा' दूर्द्धावस्थे समागमात् ॥
सोपाने ष्वधिरोहराया दधतीनां पतत्पदम् ॥२२॥

जो स्त्रियायें मकान के नीचे थीं वे झट से अपने मकानों की सीढ़ियों पर चढ़ करके ऊपरी खण्डों से हाथी पर बैठे हुए श्रीराम जी की बराबरी में छज्जाओं पर आकर बैठ गयीं जिससे श्रीरामजी का सम्यक प्रकार दर्शन हो सके ॥२२॥

रामं द्रष्टुं विव्हलानां प्रमदानां समन्ततः ॥
गृहाझणत्कृति चापुः कङ्कणै नूपुरै रपि ॥२३॥

श्रीरामजी को देखने के लिये अतिशय विह्वल हुई स्त्रियायें अपने मकानों में इधरसे उधर चारों तरफ दौड़ रही है इस प्रकार उनके दौड़ने से नूपुर कंकण किंकिनी आदि भूषणों का झनकार चारों तरफ मकानों में छाया हुआ है ॥२३॥

तद्ग्राम वनितानान्तु रामे ग्रामं समागते ॥
तपः साधनभूयोभि भूँमिः संपूतिताङ्गता ॥२४॥

इस प्रकार श्रीरामजी के ग्राम में आने पर ग्रान की वनितायें अपने तपस्यादिक पुण्य साधनों की मन में सराहना करती हुई अतिशय पवित्र अपनी आत्मा को मानकर भूमिको पवित्र कर रही हैं॥२४॥

इत्थं ग्रामाङ्गणानां स हृदियोगान्मनोहराम् ॥
निवेशयन्नात्म मूर्तिं प्राप्तो गोपस्य सद्गृहम् ॥२५॥

इस प्रकार ग्राम की अङ्गनाओं के पवित्र मनोहर हृदयोंमें अपनी श्यामल मूर्ति को प्रवेश कराते हुए श्रीरामजी गोपराज के सुन्दर घर में प्राप्त हुए ॥२५॥

द्वारं गृहस्य गोपोपि समासाद्य सहर्षितः ॥
हस्तंदत्वा सुमन्तादीन् गजादवततार च ॥२६॥

अपने घर के दरवाजे पर बरात सहित श्रीरामजी को आये हुए देखकर गोपराज भी अतिशय हर्ष में भरे हुए अपने हाथ से सुमन्त आदिकों का हाथ पकड़कर हाथियों पर से नीचे उतार रहे हैं ॥२६॥

ततः कक्षान्तरे तेन यथा योग्यं महासने ॥
संस्थापिता स्वादरेण पूर्व योगास्तु योगिना ॥२७॥

इसके बाद गोपराज ने कई आवरण भीतर ले जा करके सबको यथा योग्य आसनों पर बड़े आदर से बैठाया क्योंकि गोपराज पूर्वजन्म से कोई बड़े योगीराज थे ॥२७॥

ततः कान्ता गणं गानै र्वाद्यैः रामं नीराजितुं ॥
प्राप्त चाभ्यन्तरे गेहे रणयन्पादभूषणाम् ॥२८॥

अन्तःपुरमें स्त्रियों ने गान वाद्य पूर्वक अपने पाद आदि भूषणों के झनकारों सहित श्रीरामजीकी आरती के लिए इन्तजाम किया ॥२८॥

नीराजन पात्रहस्ता रूपेणाकृष्ट मानसा ॥
अपूर्वेणैव रामस्य मूर्ति भूताग्र मास्थिता ॥२९॥

श्रीरामजी के रूप से आकर्षित मन वाली हाथों में आरती के पात्रों को लिये हुये श्रीरामजी के अपूर्व रूप को देखकर शिलाविग्रह मूर्तियों की तरह एक टक देखती रह गयी ॥२९॥

सामूहूर्त्तं विचिन्त्याथ सुकृतैः सादितः स्वयं ॥
तं नीराज्य परं प्रीत्या निवेश्य च गृहान्तरम् ॥३०॥

उन सबने अपने सुन्दर पुण्यों से प्राप्त किये हुये श्रीरामजी का दर्शन करके एक मुहूर्त समाधिस्थ होगयीं उसके बाद अतिशय अनुराग पूर्वक आरती की तत्पश्चात् अपने महल के भीतर श्रीरामजी को लिवा ले गयीं ॥३०॥

भोजयित्वातु मातेव संनिधिस्था सुभोजनम् ॥
वार्त्ताजन्मांतरां स्मृत्य चकार विस्मयान्विता ।।३१।।

माता की तरह से श्रीरामजी के समीप में बैठकर सुन्दर पदार्थों को पवायीं और अपने जन्मान्तरीय बातों को स्मरण कर के आश्चर्य चकित होकर के श्रीरामजी को देख रही हैं ।।३१।।

इत्थं नाथ निजार्चितांघ्रि शरणान्प्रौरयानिव प्रोशसे-
दूरं जन्म मिषं कदापि वदसीत्यत्रापि कः कर्त्तृ भाक् ॥
न्यूनाधिक्य मथा परं च वदसि प्रीत्या च हेतो यदा-
तत्राप्यन्तर मात्मनां हि करणं त्वं सर्वथा दृश्यते ।।३२।।

और यह बोलीं कि हे नाथ ! आप हम सब आपके चरण आश्रिताओं को त्यागने योग्य अयोग्यों की तरह से हमारा दूर देश में जन्म है इस बहाने से आप दूर कर रहे हैं। अपने को मैं दूर का रहने वाला हूँ ऐसा कह रहे हैं बताइये तो इस स्थान पर विधानकर्ता कौन है। और इसके अलावा आप न्यूनाधिक्य भेद को भी बता रहे हैं इस स्थान पर जब अनुराग ही कारण है और सभी प्राणियों की अन्तरात्मा में उर प्रेरणा करने वाले आप ही सर्वथा देखे जाते हैं तब बताइये आपके हमारे दूर होनेका कारण क्या है? ।।३२।।

रोम्णा मुद्गम सूचितांतर गतिः प्राकट्य पारि प्लवात्-
प्रेम्णां सांहि विलंध्यतां च विसदा मासंज्य चाग्रा स्थिता।।
रामेणात्म समान्तपाद युगला गोपस्य गोप्तांगना ॥
वाग्भिः प्रीति मतीभिराशु शुचिभिः संशोलिता वैवधूः । ३३।।

इस प्रकार कहती हुई वे गोप स्त्रियायें अनुराग की अतिशय विभोरता से अन्तरात्मा की दशाओं को अपने रोमाञ्च अश्रुपात आदिक चिन्हों से सूचित कर रहा हैं और अतिशय विभोरावस्था में निर्मल आत्मदृष्टि प्रकाश को प्राप्ति की हुई श्रीरामजी की सेवा में लगी हुई हैं। श्रीरामजी ने भी अपनी आत्म प्रसन्नता से शान्त भाव देकर उनको प्रसन्न किया। अपनी आत्मा के अतिशय सुन्दरता के किरण जालों से उनके हृदयों को ऐसे प्रकाशित कर दिया जैसे चन्द्रमा अन्धकार रात्रि में प्रकाश कर देता है ।।३३।।

रामेणात्म प्रमादेन शान्त भावा प्रमादिता ॥
आत्मनः रस्मि जालेन शशिना शर्वरी यथा ।३४।

और श्रीरामजी ने अपने आत्मप्रसाद से और अपनी वाणी से अत्यन्त अनुरागवती पवित्र विचार वाली उन गोप स्त्रियों को अपने चरणकमलों का सुन्दर भक्ति युक्त बुद्धि देकर सुन्दर शील स भर दिया ।।३४।।

ततो वशिष्ठ माहूय सुमन्तमभिमत्य च ॥
आत्मनो गुरुणा तेन पुत्र्य श्चैका दशत्रिकाः ।।३५।।

इसके बाद गोपराज ने श्रीसुमन्त्र जी से सम्मत लेकर श्रीवशिष्ठ जी महाराज को बुलवाया। अपनी तैंतीस कन्याओं के साथ अपने उपरोहित के द्वारा विधान करा करके ।।३।।५

सुदाये भूषिताङ्गाश्च गुणैः रूप विलचणाः ॥
श्रीरामायार्पिताः शीघ्रं गोपेन पूर्व योगिकाः ॥३६॥

सुन्दर दामाद के लिये गुण रूप भूषित अंगवाली विलक्षण कन्याओं का विवाह कराया इस प्रकार पूर्व जन्म के योग से वे सब कन्यायें गोपराज के द्वारा श्रीरामजी के लिए शीघ्र अर्पण हुई ॥३६॥

ततस्ते नोत्तर दिने पूजितांघ्रि महात्मना ॥
चतुर्विधं रसैः षड्भिरकारि सर्व भोजनम् ॥३७॥

उसके बाद दूसरे दिन महात्मा गोपराज ने पूजित चरण श्रीरामजी की सब बरात को चतुर्विध षटरस पदार्थों से सबको सुन्दर भोजन कराया ॥३७॥

प्रति पुत्र्यष्ट दास्योपि दासाश्चापि शुभांगिनः ॥
अतिनम्र तया नून मूनं मत्वा समर्प्पिताः ॥३८॥

अपनी प्रत्येक कन्या के साथ आठ २ दासी सुन्दर अङ्ग वाली तथा बहुत से सेवकों को भी दिया और अति नम्रता पूर्वक अपने को अत्यन्त न्यून मानते हुए प्रार्थना करके श्रीरामजी से स्वीकार कराया ॥३८॥

श्रीपार्वत्युवाच-कथं गोपं गृहे देवक्षत्रियाणां परीणयः॥
कदाचित्स्त्रो रत्नमेव न तु योग्यो कर गृहः ॥३६॥

श्री पार्वती जी बोली कि हे महाराज ! क्षत्रिय जाति के होकर भी गोप जाति के घर में कैसे पाणिगृहण हो गया यदि कहो कि स्त्रियायें उत्तम थीं तो भी पाणिग्रहण करना तो योग्य नहीं था ॥३६॥

श्रीशिवोवाच-नैव गोपलको गोपचन्द्र वंशावतंशकः॥
गोपो ग्रामाधिकारित्वा द्राज्ञा मादरणीयतः ॥४०॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि वे गोपराज गायों के पालन करने वाले नहीं थे अपितु चन्द्रवंशीय क्षत्री केवल गौ पालने वालों के ग्राम के राजा थे और राजाओं के बीच में आदरणीय थे ॥४०॥

सुतानां स्वामिनः पूर्व मात्मनः कथ मुद्वहः ॥
शूची कटाह न्याये नेत्यपनीता तिसाध्वसः ॥४१॥

महाराज चक्रवर्ती जी के अनुपस्थिति पर श्रीसुमन्त जी और श्रीवसिष्ठ जी ने महाराज चक्रवर्ती जी के कुमारों का विवाह कैसे कर दिया इस प्रश्न के उत्तर में सूची-कटाह-न्याय से निर्भयता पूर्वक कर दिया ॥४१॥

तमादाय सार्वभौमं कौशलेशं निवेदयम् ॥
सैन्ये नापि प्रवर्त्तो सौत्तत्पुरस्यो पवर्त्मनि ॥४२॥

इस प्रकार कुमारों का गोप कुमारियों के साथ विवाह करके सेना के सहित आकर सार्वभौम महाराज श्रीकौशलेश जू को सब समाचारों के सहित वर दुलहिन सम्पत्ति को निवेदन किया। महाराज अवधेश जी भी अपनी सेना के सहित उसी गोप नगर के उप मार्ग से श्रीअयोध्या जी को चल पड़े ॥४२॥

सात पत्रो नातपत्रं सतं प्रच्छंश्च वर्त्मनि ।
मृगाद्रि द्रूणां नामानि गजस्थो गज वाहनम् ॥४३॥

छत्र चमरादि राज उपकरणों से सुशोभित महाराज श्री चक्रवर्ती जी चलते हुए मार्ग में बिना छत्र वाले हाथी पर चढ़ हुए गोपराज से प्रश्नोत्तर करते हुए मृगाद्रि द्रूण नाम के वन को देख करके उन गोपराज से पूछने लगे कि ॥४३॥

विलक्षणानां सम्पद्भिर्वर्णैश्च कृति भिस्तथा ॥
यत्रौहि जगतां नाथः पुरा दृष्ट्वाग्र यातिनां ॥४४॥

हे गोपराज विलक्षण सम्पत्ति पत्र पुष्प फल आदिक रंग २ के महाऐश्वर्य से पूर्ण वह वन जिसका कि आपने बहुत बड़ा महत्व बताया है वह वन जो कि बड़ा ही सुन्दर है सो कैसे है, इतना प्रश्न करते ही आगे बढ़ने पर जगतपति महाराज चक्रवर्ती जी अपने दृष्टि के सामने उस वन को देखे ॥४४॥

इत्यन्तरे चाभ्र वृन्दै रिवावृत्त विभावसुम् ॥
बहु शोनोरुहावृन्तं शिखराकाश लम्बितम् ॥४५॥

जो कि घनघोर मेघ मण्डल के सदृश अथवा अग्नि ज्वाला के मण्डल सदृश विविध प्रकार के पर्वतों के आकाश चुम्बिशिखरों के सदृश ॥४५॥

अभूत्पूर्व द्रुमा लोक्य पार्थिवेणोक्त एव सः ॥
सविस्तरं तदै तिह्यं वर्णि तुं च प्रचक्रमे ॥४६॥

अद्भुत वृक्षों का समूह चमत्कार युक्त देखकर महाराज श्रीचक्रवर्तीजी को गोप ा ज ने उस वन के नजदीक आते हुये वन की महिमा तथा इतिहास को वर्णन विस्तार किया ॥४६॥

गान्धर्वो सौ महाराज दृश्यते ज्योतिषा वृतः ॥
द्रुम राजो भवद्भिस्तु गन्धर्वेणा भिरोपितः ॥४७॥
आकाश लम्बितो प्यासी योजने परिवर्तितः ॥
वेदिको विदितो लोके चिरन्तन समाश्रयः ॥४८॥

कि हे महाराज यह जो चमत्कार युक्त ज्योति मण्डल से घिरा हुआ वन आप लोगों को दीख पड़ रहा है वह एक योजन के विस्तार में फैला हुआ वन स्वर्ग के गन्धवराज का लगाया हुआ है इस नवन के बीच में एक विशाल वेदी के मध्य मण्डप है जो कि सर्व लोक चिरन्तन प्रसिद्ध है ॥४७-४८॥

गूढ़ जाति पर्णफलैः पीतारुण प्रवर्तते ॥
बुध्नतः शिखरं तोसौ शाखा मिश्र समाङ्कुः ॥४९॥

महान पत्र पुष्प फलों से युक्त भवरों से पिया हुआ रस परागादि वाला तथा वृक्षों के ऊँचे शिखरों से देखने वालों को यह वन पर्वत शिखरों के सदृश प्रतीत होता है ॥४९॥

अस्यास्ति पश्चिमे भागे नाम्ना नाग हृदो महाम् ॥
तत्रापि वर्तते नागो नाम्ना सीज्जल केलिकः ॥५०॥

इस वन के भीतर मण्डप के पश्चिम भाग में एक बहुत बड़ा नाग सरोवर नाम का तालाव है उस तालाव में जल केलिक नाम से प्रसिद्ध वह नागराज स्वयं निवास करता है ॥५०॥

सखायौता वुभौ देव ह्येकत्रैव कुटुम्बिनौ ॥
वनेस्मिन्नाव सत्येवं पूर्वेन्द्रेणा वरीडितः ॥५१॥

वह गन्धर्वराज तथा नागराज दो जने हैं दोनों का आपसमें परम मित्रता है और प्राचीनकाल में इन्द्रसे पीड़ित होकर ये दोनों जने कुटुम्ब सहित इस वनमें वास करते हैं ॥५१॥

स्वर्तोचित सौरभाङ्गः प्रसूनस्या स्य सौरभैः ॥
देशोपि वासितां याति वसन्तर्त्तौ शुभां सुकैः ॥५२॥

इस वन के पुष्प फल पत्रों की सहज सुन्दर सुगन्धी स्वाद इस वन के आस पास बाहरी वनों में भी वसन्त ऋतु के तरह से अंग वस्त्र सदृश फैली रहती है ॥५२॥

विधते दुर्दिनं दूराद्धनाना मिव योजनात् ॥
मरन्दा कर्षिता यस्य माला सांघ्रालिनां किल ॥५३

बहुत दिनों से अपने दुःखमयी दिनों को बिताता हुआ यह गंधर्वराज एक योजन में फैले हुए मेघ मण्डल के सदृश फैले हुये इस वन के द्वारा पराग और मालाओं की सुगन्ध वर्षा करता हुआ बाहर के भवरों को भी अपनी तरफ खींचता है ॥५३॥

पृष्टि चित्रार्पितादर्श प्रतिमं छदनं हितत् ॥
नागवल्ल्या कृति कांत्या तुल्यं पर्वेन्दुनापि च ॥५४

यह वन शरदपूर्ण चन्द्रकी तरह से प्रकाश और गोलाई में सदृश है और इस वन का पृष्ठ भाग दर्पण की तरह से प्रतिबिम्ब देने वाला चित्र विचित्र रंग का कान्ति में नागवल्ली के सदृश आकार वाला है ॥५४॥

लम्बितं हस्त मात्रं च पृथुलं तु वितस्तिना ॥
अरुणा मञ्जरी चास्य वहु वर्ण फलां चिता ॥५५॥

इस वन के वृक्षों की मञ्जरी फल पण कोई तो एक हाथ के कोई एक वितस्ती के लम्बे मोटे रंग रंग के पेड़ों को भरे हैं ॥५५॥

प्रतिशाखं फलं तस्मिन्भिन्नं पुष्पं तथैव च ॥
स्वादु वर्णा कृति गन्धैर्भिन्नं सर्वं विलक्षणैः ।५६॥

उस वन के प्रत्येक वृक्षों की शाखा तथा फल उसी प्रकार पुष्प और पत्र भी अपने स्वाद रूप रंग गन्ध आकार आदि से सब अलग २ विलक्षण हैं ॥५६॥

लता जालान्यनेकानि कृत कुञ्जान्य नेकशः ॥
फल पुष्प द्रुमाश्चैव वाटिकाः सुमनोहराः ॥५७॥

इसी प्रकार उस वन के वाटिकादि अनेक प्रकार के लताओं का फल पुष्प पत्र वृक्षादिकों से अनेक प्रकार के कुञ्जे आदि के रूप में सुन्दर मनोहर जाल बिछे ॥५७॥

रक्षन्त्यस्य च पर्य्यन्तं निश्वास विष वृंहिताः ॥
दीर्घ काया दार्वीकरा दूरान्निद्रां विधायिनः ॥५८॥

इस बनके चारों तरफ विशाल शरीर वाले महान् बिषैले स्वाँस वाले बड़े २ क्रोधित सांप अपने निद्रा को त्याग कर इस बन की रक्षा करते हैं ॥५८॥

तेन हित्वा योजनार्द्धं पथिका विदेति ह्यकाः ॥
निः सरन्त्यत्र मार्गेतु राज राजेश्वर शृणु ॥५६॥

हे राज राजेश्वर सुनिये इस बन के मरमग्य पथिक लोग इस बन से दो कोस की दूरी से अपनी यात्रा करते हैं ॥५६॥

शृन्वन्शृन्वन्स चैतिह्यमथ गोपान्नराधिपः ॥
आपो पां तं तद्वनस्य वार्त्तां वार्त्ताज्ञ यष्टिकः ॥६०॥

इस प्रकार गोपराज से कथा सुनते २ महाराज चक्रवर्ती जी वातो की पंक्ति के भूल में रड़ कर उस नाग कुण्ड के अत्यन्त समीप में आ पहुँच गये ॥६०॥

उपकण्ठे नक्त मस्याः सरोयुक्ते वनान्विते ॥
ध्रुवमर्थं प्रदायास्तु वाटिकाया वसेश्वर ॥६१॥

तो अकस्मात इस सरोवर से युक्त बन के समीप से निश्चित महान् अर्थ को देने वाला यह अस्थान है। हे ईश्वर आप इसी बाटिका में रात्रि भर ठहरिये ॥६१॥

इत्थं सगोः सकाशाच्च श्रुत्वा गांध्रुव मर्थदाम् ॥
तत्रव वस्तुं चकमे चक्रवर्ति नृपाधिपः ॥६२॥

इस प्रकार आकाशवाणी से एक गऊ की आवाज सुनकर गऊ तो महान सुन्दर निश्चित अर्थ को देने वालो होतो है ऐसा निश्चय करके रात्रि में श्रीचक्रवर्ती जी ने इसी जगह ठपरने का निश्चय किया ॥६२॥

अथोच्चैः प्रतिहाराणां शब्दैश्च प्रेरिताग्रगैः ॥
सैन्यके राजराजो सौ विशालं रोपित ध्वजम् ॥६३॥

इसके वाद प्रतिहारियों के द्वारा बरात के फौज पलटन का अगुआ ध्वजा वाले को सूचना दी गई कि आज बरात यहाँ पर ठहरेगी राज राजेश्वर चक्रवर्ती जी की आज्ञा से ध्वजारोपित होगई बरात ठहर गई ॥६३॥

स्थलं वनान्तरं रम्य मुपकण्ठं सरोग्रकम् ।
विभक्तं द्रुम पंक्त्या च विवेश विसद प्रभः ॥६४॥

जब सेना ठहर गई तो कुछ रात्रि बीतने पर आकाशवाणी हुई कि इस बन के अन्दर एक रमणीय सुन्दर सरोवर है उसके समीप में ही सुन्दर वृक्षों की पंक्ति से सुन्दर विभाग वाले प्रकाशमान बन में प्रवेश करके ॥६४॥

भवन्तुद्यु घताः सर्वे भवन्तो भोजनायवै ॥
यामैक विगतां यां च रात्रा वित्युच्च शद्वितम् ॥६५

आप लोग सब कोई भोजन के लिए तैयार ही जाइये क्योंकि रात्रि एक याम बीत गई है ऐसी आकाशवाणी को महाराज चक्रवर्ती जो ने सुना ॥६५॥

ततः स्थाल्यां काञ्चनस्य भोजनं हि चतुर्विधम् ॥
हस्तेन वनितानां च झणत्कारेण कङ्कणैः ॥६६॥

इसके बाद बहुत सी स्त्रियों का झुण्ड अपनी सुन्दर सिंगार सजावट से नूपुर किंकिनी कङ्कण के झनकार पूर्वक हाथों में स्वर्ण थालियों के ऊपर भक्ष्य भोज्य,लेह्य पेय लिए चतुर्विध पदार्थोंको लेकर॥६६

कटाक्षेण समं सर्वैं जनैश्चलघु मध्यमैः ॥
युक्तं षड्रसैर्लब्धं विधि वद्विस्मय प्रदम् ।६७॥

अपनी कटाक्षों से बरात के ऊँच नीच सभी जनों को सुन्दर आदर पूर्वक षटरस विविध प्रकार के आश्चर्य देने वाले पदार्थ भोजन के लिये दिया ॥६७॥

दिव्यां शुकै कोत्तरीयं विधिना भोजनोत्तरम् ॥
प्रसन्नेन्दु मुखीनां च दत्त माननवीक्षणैः ॥६८॥

इस प्रकार विविध विधी से भोजन कराके बरातियों को उन चन्द्रमुखियों ने अनेक प्रकार सुन्दर कटाक्ष करके दिव्य ओढ़ना बिछवना आदि देकर ॥६८॥

अथाहि वल्लि दलकं गन्ध चूर्ण पुटी कृतम् ॥
सहमन्दार मालाभिस्तासां हस्तात्समंततः ॥७०॥

उसके बाद नागवल्ली दलक नाम के पान बीड़ा को सुगन्धित चूर्ण आदि तथा मंदार पुष्पों को मालायें उन चन्द्रमुखियों के हाथ से सब बरातियों को दिया गया ॥६९॥

वृतान्त मिति न ज्ञातं केनापि तत्र सज्जनैः ॥
कस्मादागता चैताः पुनः कुत्र गता अपि ॥७१॥

परन्तु यह चन्द्रमुखी कहाँ से आई फिर कहां गई बरात के किसी सज्जन ने भी यह वृतान्त नहीं समझ पाया ॥७०॥

परं जिज्ञास मानं च चरितं जन मण्डलम् ॥
श्रीराम वरयानस्य न शिश्येपि श्रमान्वितम् ॥७२॥

परन्तु श्रीराम जी के बराती सब रास्ते के श्रम,से श्रमित भी थे परन्तु इस चरित्र के समझने के लिये सजग रहे ॥७१॥

अथ प्राप्त निसीथेतु कौशलेशस्य सन्निधौ ॥
गन्धर्व नाग राजौ चतेजसावृत्त विग्रहौ ॥७२॥

इसके बाद रात्रि बीतने के वक्त महाराज कौसलेश जी के पास में महान्प्रकाशमान विग्रह वाले गन्धर्वराज और नागराज आये ॥७२॥

अदृश्यौ रचकै द्वारे प्रभावन्तो प कार्य्यके ।
रामे चैवात्मजायोक्तु मीचकौ समवायतुः ॥७३॥

वे गन्धर्वराज और नागराज अत्यन्त प्रकाशमान विग्रह वाले होने पर भी द्वारपालों से अदृश होकर अपनी कन्याओं के लायक श्रीरामजी को देखने के लिए श्रीरामजी के समीप में आ पहुँचे ॥७३॥

अविस्मयेन राज्ञापि न भोगां स्मृति चेतसा ॥
नत्युत्तरं चादृतौ तौ स्थापितौ चाशने शुभे ॥७४॥

महाराज कौशलेश जी ने भी उन नाग गन्धर्वराजों के प्रभाव पर कुछ भी आश्चर्य न करके उन दोनों को नमस्कार करके सुन्दर आसन में बैठाकर आदर किया ॥७४॥

तदा गंधर्व राजापि वृत्तान्तं चात्मनो यथा ॥
राज्ञे निवेदया मास यथेन्द्रेण तिरस्कृतः ॥७५॥

इसके बाद उन गन्धर्वराज ने भी जिस प्रकार इन्द्र से तिरस्कृत होकर यहां आये थे सब समाचार महाराज से निवेदन किया ॥७५॥

श्रीपार्वत्यूवाच-कस्मात्तिरस्कृतो देव गायको गुणवत्तरः ॥
गुणज्ञेन सुरेशेन कथं नागे-हितस्यवै ॥७६॥

श्रीपार्वती जी बोली कि हे देव बड़े गायक अति गुणवान गन्धर्व को इन्द्र ने किस लिये तिरस्कार किया और नागराज से उनकी ॥७६॥

सख्यं हि परमं यातं कृतज्ञस्य कृतज्ञके ॥
कथयस्व कथां तद्धि कौतुकेन समासतः ॥७७॥

मित्रता कैसे हुईये दोनों तो परम कृतज्ञ हैं अतः संक्षेप से कौतुक पुर्वक इस कथा को कहिये ॥७७॥

शिवोवाच-महाभागस्य तस्यैव गंधर्वस्य गृहेशिवे ॥
जाताः पुत्र्यो महाभागा गुणरूप विलक्षणाः ॥७८॥

श्रीशंकर जी बोले कि हे शिवे महा भागशाली गन्धर्वराज के घर में महा भागशालिनी दिव्य गुण रूप विलक्षण कन्यायें उत्पन्न हुई थी ॥७८॥

मुग्ध यौवन काले ता देव राज्ञाप्य भीप्सिताः ॥
पराङ्मुखी वभूवुस्ता स्तस्मैतातं निषिध्यवै ॥७९॥

जब वे कन्यायें मुग्ध युवावस्था वाली हुई तो देवराज इन्द्र ने उनकी चाहना किया परन्तु उन कन्याओं ने अपने पिता के द्वारा इन्द्र का तिरस्कार किया ॥७९॥

भविष्यामो वयं तात श्रीरामस्यैवह्य ॥ंगनाः
नियन्तुर्देव देवानां को वराकः सुरेश्वरः ॥८०॥

कन्याओं ने कहा कि हे पिता हम लोग तो सर्वलोक नियन्ता देवाधिदेव श्रीरामजी की अंगना होवेंगी उन श्रीरामजी के आगे यह देवताओं का राजा कौन टोढ़ी जानवर है? ॥८०॥

निर्दिस्य मानः सोप्येवं सुरेशेना वमानितः ॥
पूर्व कृन्मित्र नागस्य चकार वसतिं वने । ८१॥

गन्धर्वराज ने भी कन्याओं को देने से इनकार किया तो इन्द्र ने गन्धर्वराज का अपमान किया तब गन्धर्वराज अपने मित्र नागराज की पहले से बनाई हुई इस भूमि के निवास स्थान में आकर बसने लगे ॥८१॥

निवेदयित्वा तत्सर्वं श्रीमद्दशरथे नृपे ॥
नाग गन्धर्व राजाभ्यां श्रीरामे योजिताः सुताः॥८२॥

इस प्रकार उन नागराज के कथा को महाराज ने सुना फिर श्रीनागराज और गन्धर्वराज ने अपनी कन्याओं का श्रीरामजी के साथ विवाह कर दिया॥८२॥

ताभ्यां दत्तानि रत्नानि कन्या रत्नान्यपि प्रभुः ॥
श्रीमद्दशरथः श्रीमान् गोपेन गुणवत्तरः ॥८३॥

दहेज में बहुत सा रत्नादिक धन उन कन्या रत्नों के साथ उन गन्धर्व नाग राजाओं से प्राप्त करके श्रीमान् गुणवान श्रीदशरथ जो महाराज का श्रीमान गोपराज के साथ ॥८३॥

पुरीं पुष्पवतीं प्राप्य राज्ञा रत्न ध्वजेन च ॥
आदराभि गम्यमानो विवेश विसदां पुरीम् ॥८४॥

पुष्पवती नगरी में आये वहां के राजा रत्नध्वज ने बहुत बड़ा आदर किया श्रीचक्रवर्ती जी महाराज उनकी सुन्दर नगरी में प्रवेश किये ॥८४॥

तस्य कन्याः शोभनाङ्गी समादाय सुदायकैः ॥
सुवाग्भिः परितोष्यैन मन्येषां कांक्षिते ययौ ॥८५॥

और रत्नध्वज ने भी अपनी सुन्दर अङ्ग वाली कन्याओं को सुन्दर दामाद के लिए सुन्दर वाणियों तथा सन्मान से सन्तुष्ट करके विवाह कर दिया इस प्रकार चक्रवर्ती श्रीदशरथ जी अन्य राजाओं के मनोरथों को पूर्ण करते हुए चले ॥८५॥

इत्थं बहु नृपाणां च सुता रामे नियोज्य च ॥
श्रीमत्कौशलाधीशः पौरै दूरात्म मागतः ॥८६॥

इस प्रकार बहुत से राजाओं के कन्याओं से श्रीरामजो का नियोग करके श्रीमत्कौशलाधीश्वर श्री अयोध्या जी के नजदीक आये और अयोध्यावासी जनता भी बहुत दूर तक श्रीराम जी के बरात के स्वागत करने के लिए आयी ॥८६॥

श्रीराम दर्शनोत्कण्ठै र्हस्तोपायन शोभनैः ॥
रथ्या प्रति शरन्नाथ बिवेश स्वात्म मन्दिरम् ॥८७॥

क्योंकि श्रीअयोध्या नागरिक जनता को श्रीरामजी के दर्शन की अत्यन्त उत्कन्ठा थी अतः हाथों में सुन्दर शोभा युक्त उपायन भेट लेकर प्रत्येक गलियों में स्वागत किया इस प्रकार अयोध्या आकर अपने मन्दिर में प्रवेश किये ॥८७॥

श्रीपार्वत्युवाच-नाथ ते वदन चन्द्र धर्मिणः स्पन्द मान म मृताधिका मृतम् ॥

पीय पीय न च तृप्ति माययौ मे मनो रघुपतेः कथात्कम् ॥८८॥

श्रीपारवती जी बोलीं कि हे नाथ बड़े धार्मिक आपके वदन चन्द्र से श्रीरघुनाथ जी के कथा रूपी अमृत का भी अमृत वर्षा होते हुये पीते २ मेरा मन तृप्ति को नहीं प्राप्त होता है ॥८८॥

श्रीयाज्ञवल्क्योवाच–श्रूयमाण उमयोपचारितं शङ्करः सतत् भाव संभृतम् ॥

राम मूर्ति हृदयो त्तमेस्फुटं संस्मयन्प्रियतमां मुदं गतः ॥८९॥

श्रीयाज्ञवल्क्य जी बोले कि हे भरद्वाज सुनती हुई पार्वती के अत्यन्त श्रद्धा युक्त प्रश्न पर श्री शंकर जी हमेशा भाव को सम्पुष्ट करने वाला तथा श्रीराम मूर्ति को उत्तम हृदय में प्रकाश करने वाला श्रीराम कथा को कह करके प्रियतमा श्रीपारवती जी को आनन्दित करने लगे ॥८९॥

इति श्रीशङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां श्रीरामस्य गौणोपयम वर्णनो नाम द्वाषष्टित्तमः सर्गः ॥६२॥

इति श्रीमधुकर रूपीरसा स्वादिना कृता टीकायां श्रीरामस्य गौणो पयम वर्णनो नाम द्वाषष्टित्तमः सर्गः ॥६२॥

श्रीयाज्ञवल्क्योवाच–राजत्वंत पश्चिमायां दिशि देशाः शुभाशुने ॥

पुर्य्यश्च तत्र राजानः श्रीरामे स्वानु बन्धिनः ॥१॥

श्रीयाज्ञवल्क्य जी बोले कि हे मुने ! पश्चिम दिशा के सर्वदेशीय राजाओं की प्रत्येक पुरियों में जहाँ २ श्रीरामजी से स्वानुबन्ध हुआ है ॥१॥

तेषां चात्र समासेन नामानि कथयाम्यहं ॥

दत्ता यैः स्वात्मजा दिव्याः श्रीरामाय सुदायकैः ॥२॥

उन २ अपनी कन्याओं को सुन्दर दमाद श्रीरामजी के देने वाले दिव्य राजाओं के नामों को भी मैं कहता हूँ सुनिये ॥२॥

संस्पृश्य दक्षिण प्रान्तं देशो मालवकः शुभः ।

अवन्तिकापुरी ख्याता राजा तत्र महाबलः ॥३॥

दक्षिण दिशा को स्पर्श करने वाला मालवक नामक सुन्दर देश में प्रसिद्ध अवन्तिकापुरी नामक नगरी के राजा महाबलवान ॥३॥

स नाम्ना श्चन्द्र मौलीय श्चन्द्र मौलेश्च सेवकः ॥

तस्या व रोधे पत्नीनां सहस्रैकं तु मुख्यतः ॥४॥

वे राजा श्रीचन्द्र मौली जी शंकर जी के परम भक्त थे उन चन्द्रमौली जी के घर में मुख्य एक हजार पत्नी थी ॥४॥

श्रीरामं पति मुद्दिश्य याभिः पूर्वं कृतं तपः ॥

ताश्च सर्वास्तस्य राज्ञो गृहे जाताः सुलक्षणाः ।५।

श्रीरामजी के पती होने की कामना से जिन्होंने पूर्व जन्ममें कठिन तपस्या की थी वे सब महाराज चन्द्रमौली जी के घर में उन सब स्त्रियों से पैदा हुई ॥५॥

तासु सर्वासु पत्नीषु शङ्करस्य प्रसादतः ॥
महोच्चर्क्षे सुमाङ्गल्य तासां सूचित सत्सुखे ॥६॥

महाराज चन्द्रमौलीजीकी उन एक हजार पत्नियों में शंकरजीकी कृपा थी इस लिए उच्च नक्षत्र में सुन्दर मंगलमयी उन कन्याओं का जन्म सत्य सुखका सूचक था ॥६॥

राजन्मम प्रसादेन जातास्तेहि गृहे सुताः ॥
श्रीरामं स्वपतिं प्राप्तुं ताभिः पूर्वं कृतं तपः ॥७॥

हे राजन् मेरी कृपा से ये सब कन्यायें तुम्हारे घर में पैदा हुई है क्योंकि इन्होंने पूर्वजन्ममें श्रीरामजी हमारे पती हों इस भाव से मेरे लिए घोर तप किया था ॥७॥

तेन श्रीरामचन्द्राय देयाः सर्वा विधानतः ॥
इत्थं स शङ्करेणाथ स्वप्ने रात्रौ सुबोधितः ॥८॥

इस लिए उन कन्याओं को सुन्दर वैदिक विधी से विवाह करके श्रीरामजीको दे दो इस प्रकार राजा को स्वप्नमें शंकर जी ने समझाया ॥८॥

तत्स्वप्नं हृदये धृत्वा मंत्रं कृत्वा शुभे दिने ॥
सचिवोपि पुरोधाश्च कोशलायां सुप्रेषितौ ॥९॥

यही स्वप्न को मन में रखकर सुन्दर दिन में अपने राजसभा में निश्चय करके मन्त्री और उपरोहित को श्रीअयोध्या जी में भेजा ॥९॥

स्व हस्तन्यस्त वर्णां तु कौशलेशस्य पत्रिकाम् ॥
संप्राप्य तेन राज्ञावै पुत्रीणां सुमहोत्सवे ॥१०॥

वे मन्त्री और उपरोहित अपने राजा के हस्तलिखित कन्याओं के विवाह विषयक पत्र को महाराज अवधेश जी के लिये समर्पण किया ॥१०॥

: आ समुद्रान्महीपाला बान्धवा श्चापि दूरतः ॥
निमंत्रिता स्वादरेण ते च सर्वे समागताः ॥११॥

तथा उसी पत्रिका के अनुसार तुरन्त बरात के स्वागत के लिए समुद्र पर्यन्त सम्पूर्ण पृथ्वी के राजाओं तथा बन्धु वर्गों को निमन्त्रित किया सभी लोग दूर २ से बड़े आदर पूर्वक आये ॥११॥

आसादित पुर प्रान्तं श्रुत्वा श्रीकौशलेश्वरम् ॥
नागाश्व रथ यानैश्च दिव्याम्बर विभूषणैः ॥
उपायनैः पूजयित्वा चानेतुं सुनिवासके ॥१२॥

महाराज अवधेश जी बरात के सहित हमारी नगरी के समीप आ पहुंच गये हैं सुन करके अगुवानी के लिये हाथी घोड़े रथ पालकी दिव्य वस्त्र भूषण अनेक प्रकार की पूजा के लिए उपायन भेटों सहित ॥१२॥

वान्धवा अपि राजानो प्यादरे कुशला हिये ॥
प्रेषिताः सज्जनाभिश्च दिव्य गान महोत्सवैः ॥१३॥

अपने वन्धु वर्ग तथा सर्वदेशीय राजाओं द्वारा स्वागत की बड़ी कुशलता के लिये दिव्य गान उत्सव पूर्वक जनवासे में लाने के लिये भेजा ॥१३॥

तैस्तं यथा समादृत्य श्रीराम दर्शनोत्सवैः ॥
सुनिवासे निवेश्याथ मुदेनाति समागताः ॥१४॥

श्रीराम जी के दर्शन की अत्यन्त उत्सुकता से यथा योग्य सबका आदर करके जनवासे में ठहराया स्वयं अति आनन्दमग्न होकर महाराज चन्द्रमौली जी के पास आये ॥१४॥

वर्णयन्ति च ते सर्वे रामरूपं मनोहरम् ॥
अन्यच्च विस्मृतं सर्वं दैहिकं चाप्य वश्यकम् ॥१५॥

मनोहर श्रीरामजीके रूपको देखकर सभी लोग आपसमें वर्णन करने लगे अपने शरीर सम्बन्धी समस्त कृत्यों को भूल गये ॥१५॥

ततः सुलग्ने वहुशः समाजैः सम्वन्धिनं कोशलराज राजम्॥
अश्लेषितुं सोपि जगाम राजा ह्यु पायनैं हर्षितमानसोपि॥१६॥

इसके बाद महाराज चन्द्रमौली जी भी सुन्दर लग्न मुहूर्त को जान करके बहुत बड़ा साज समाज उपायन भेंट सहित सत्यम्त हर्षित मन होकर के अपने प्रति सम्वन्धित महाराज श्रीकौशलपाज जी से आश्लेषण भेट करने के लिये चले ॥१६॥

अपूर्व रूपं परिदृश्य चांगे श्रीरामचन्द्रस्य मनश्च चक्षुः ॥
दत्वाहि सर्वे च समागतास्ते तद्वर्ण यन्तोहि परस्परं च॥१७

दर्शन के बाद श्रीरघुनाथ जी के श्रीविग्रह में अतिशय सुन्दर अपूर्व रूप को देखकर मन तथा नेत्रों को श्रीरामजी के लिये भेट चढ़ाकर दुल्हा के रूप का परस्पर वर्णन करते हुए अपने २ घरों में आये ॥१७॥

हस्त ग्रहार्थं सुदिनं समेत्य पुरोधसा मात्य समाजकैश्च ॥
आनीय श्रीकोशल राज राजं निवेश्य कक्ष्यांतर मादरेण ॥१८॥

फिर कन्याओं के पाणिग्रहण के लिए सुन्दर दिन निश्चित करके मन्त्री और उपरोतादिक समस्त समाज के सहित महाराज श्री कौशलराज जी को अपने महल के भीतरी भाग में बड़े आदर पूर्वक बुला करके॥१८॥

प्रक्षाल्य पादौ वहु शोर्हणाभिः पूर्वं वशिष्ठस्य ततो नृपस्य॥
संस्थापिता वासन विस्तराढ्ये ह्यवन्तिकेशेन सुनम्र भावात् ॥१९॥

चरण प्रक्षालन तथा वहुत सामग्रियों द्वारा पूजन विधियों से वड़ी नम्रता पूर्वक अवन्तिकादेश के राजा चन्द्रमौली जी ने प्रथम श्री वशिष्ठ जी का पूजन करके उसके बाद महाराज श्रीअवधेश जी का पूजन किया फिर उत्तम विस्तरों में बैठा करके ॥१९॥

श्रीरामचन्द्रस्य ततोंघ्रि युग्मं सरोजशोभं शुभ दर्शनस्य ॥
देयं नियोज्याथ सभार्य्यकेन प्रक्षालितं भाग्य सुशंस्य तेन ॥२०॥

इसके बाद महाराज चन्द्रमौली जी ने अपनी पत्नी के सहित अपने भाग्य की सराहना करते हुये सुन्दर दर्शन श्रीरामचन्द्र जी के कमल सदृश दोनों चरणों को धोकर देने योग्य पदार्थों को अर्पण करके ॥२०॥

रत्नांशुभि दृष्टि चमत्कृताग्रे दधन्दधन्नर्म्म पटेऽथ पादौ ॥
वाद्य प्रघोषे तु दिगन्त व्याप्ते विवेश रामोवर मण्डपंतत् ॥२१॥
तदोपनीतास्तु सुवासिनीभिर्दिव्याम्बरा दिव्य विभूषणाङ्गाः ॥
मुख्यैक मात्रा महराज कन्याः गानेन वाद्येन पिक स्वराभिः ॥२२॥

फिर दृष्टि को चकाचौंधी देने वाले रत्न रचित कोमल पावणा देते हुये और दिगन्त व्यापी बाजाओं के घोष पूर्वक मण्ड के भीतर श्रीरामजो को लिवा लाये दिव्य वस्त्र भूषणों से भूषित अङ्ग वाली बहुत सी देश २ की राजकन्यायें स्वासनियों के बीच कोकिल कन्ठियों के गान वाद्य सहित राजमाता ने द्वार परीक्षण किया ॥२१-२२।

वेदान् गृणद्भि मुनिभि स्तदा च वाद्यैश्च गानैर्जय शव्द सोच्चैः ॥
समर्प्पिताः श्रीरघुनन्दनाय राज्ञात्मजारूप मनोहरा वै ॥२३॥

इस प्रकार वर के मण्डप में आने पर मुनियों ने वेद ध्वनि की विविध प्रकार के बाजे बजे जय और स्तुति के शब्दों से उच्च स्वर पूर्वक महाराज चन्द्रमौली जी ने अपनी मनोहर रूपवती कन्याओं को श्रीरघुनन्दन जी के लिए अर्पण किया ॥२३॥

देयं सुदाये तु यदात्मजानां रत्नानि वस्त्राणि च वाहनानि ॥
निवेद्य सर्वं नृप राजराजं तुष्टाव राजाति सुनम्र भावात् ॥२४॥

तथा रत्न वस्त्र वाहनादिक बहुत सा दहेज कन्याओं के निमित्त देकर फिर महाराज चन्द्रमौली जी ने बड़ो नम्रभाव से सुन्दर दमाद श्रीरामजी की तथा महाराज श्रीअवधेश जी की स्तुति किया ॥२४॥

राजोवाच—यत्प्रोञ्छनं ते पद पादुकायाः वस्त्रं शिरो वेष्टन कंस मे स्यात् ॥
सोहं कथं षोडशभिः प्रचारैः करोमिते पूजनमिच्छयापि ॥२५॥

महाराज चन्द्रमौली जी बोले कि मेरे मन में आप लोगोंको षोडषोपचार पूजा करनेकी अतिशय इच्छा होने पर भी कैसे कर सकता हूँ क्योंकि जो वस्त्र रत्न सम्पत्ति आप लोगों की चरणपादुका झाड़ने में लगती है वह मेरे शिर का पगड़ी है ॥२५॥

यद्वै भवास्ते गुण वैभवाश्च शंख्याति रेकात्परि वर्तमानाः ॥
तेन प्रशंसा वचन प्रवृत्तिर्न मेत्वयि प्रोत्सहते विशेषात् ॥२६॥

और जो आपका बाहरी वैभव तथा अन्दर के स्वाभाविक सद्गुण वैभव सो तो असंख्य है अब मैं अपने वचन प्रवृत्ति से यदि आपकी प्रशंसा करने लगूं तो यथार्थ भी नहीं कह सकता तब विशेष कैसे कह सकता हूँ ॥२६॥

नियोजितार्के च यथाहि दृष्टि निवर्तते रूप मलभ्य माना ॥
तथा गतिर्मे वचन प्रवृत्ति स्त्वाय प्रभा भानुशत प्रदीप्तौ ॥२७॥

जैसे कोई सूर्य के दर्शन के लिए दृष्टि फैलावे सूर्य का दर्शन न होकर किरणों से ही दृष्टि लौट आती है उसी प्रकार करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाश करने वाले आपके प्रभाव के आगे मेरे बचनों की गति है ॥२७॥

त्वं चार्हणीयो हर्ण योग्य कोहं रीत्या न शक्त्या नरराज राज ॥
तदं जली सम्पुट कं मदीयं कृपालु दृष्ट्या कुरु संचनीयम् ।२८॥

हे नर राज राजेश्वर आप तो सर्व लोक पूज्य है और मैं आपका पुजारी हूँ अतः हे कृपालो आप मेरी यह सम्पुट अंजली रूप पूजा को अपनी कृपा दृष्टि से स्वीकार कीजिये ॥२८॥

अर्च्यं समर्चंति जना अवश्यं धनायताः केपि धनेन हीनाः ॥
नाना सुरत्नैः फल पत्र पुष्पैर्कार्यंसतां सूचन भावकं तत् ॥२९॥

क्योंकि पुजारी लोग चाहे धनवान हों चाहे धन हीन हो पुज्य की पूजा तो करते ही हैं चाहे वह पूजा विविध प्रकारके रत्नों से हों अथवा पत्र पुष्पों से हो सत्पुरुषों को तो पुजारियों के भावना में ही दृष्टि होती है ॥२९॥

जनै रदृश्यो निकटस्थकै र्यः सोहं कृतो दूर तरैः प्रदृश्यः ॥
शिलोच्चयानां शिखिराश्रितानि स्थलं तृणानीव त्वया कृपालो ॥३०॥

हे कृपालो जो आपका दर्शन समीप वासियोंको भी दुर्लभ है वह अपना दर्शन आपने दूर होने पर भी मेरे को दे दिया अतः यह आपकी कृपालुता जैसे पर्वत अपने आश्रित तृणों को अपने शिर पर रखते हैं इस तरह की मेरे ऊपर उदारता है ॥३०॥

इति सुरुचिर वाग्भिर्नम्रभावै र्स राजा रविकुल मणिमर्च्य प्राप्यतेन प्रशंसाम्॥
तदनुसकल विप्रान्पूजयित्वा प्रतिक्षा नपर जन समाजं चादृतुं ह्या जगाम ॥३१

इस प्रकार सुन्दर नम्र भाव से प्रिय वाणी द्वारा सूर्य कुल मणि महाराज अवधेशजी की पूजा किये और महाराज अवधेश जी ने भी आपकी प्रशंसा को उसके बाद आपने सब ब्राह्मणोंकी पूजा को फिर सभी प्रतीच्छित जनों की सब समाज की पूजा सत्कार के लिए आगे बढ़े ॥३१॥

ततश्च मण्डपाङ्गणे समस्त पौर योषिता-
नीराजनीय हस्तका नीराजितुं बधूवरौ ॥
समागताः सुहर्षिता मनोहरौ मनोहरा-
नीराजयन्तिसुस्मिताः प्रवार्ज्यवाज्य भूषणम् ॥३२॥

इसके बाद नगर की स्त्रियायें वर वधू की आरती के लिए आरती के योग्य सामग्रियों कोलेकर अत्यन्त हर्षित मन होकर मण्डप के आगन में आई उन मनोहर स्त्रियों ने बहुत सा वस्त्र भूषण सम्पत्ती को मनोहर वर दुलहिनियों पर निछावर करके, अत्यन्त अनुराग पूर्वक मन्द मुसुकाती हुई आरती किये ॥३२॥

अनङ्ग रङ्ग वीक्षणै रनङ्ग कोटि सत्प्रभं-
विलोकयन्ति ता मुदा विमोहनं समागताः ॥
ततश्च तासु कापि या विचक्षणाति पण्डिता-
स्वभिज्ञतां परिज्ञया च कार प्रश्ण मद्भुतम् ॥३३॥

इसके बाद कोटि कन्दर्प कमनीय अत्यन्त मन मोहन दिव्य प्रकाश विग्रह वाले श्रीराम जी को सुन्दर काम कला के कटाक्षों से आनन्दपूर्वक दर्शन करती हुई उन सब स्त्रियोंमें से कोई सूक्ष्म बुद्धि वाली पण्डिता ने श्रीरघुनाथ जी के पाण्डित्य की परीक्षा के लिए अद्भुत प्रश्न किया ॥३३॥

वनितावरं प्रत्युवाच-सशी च तस्यो परि सं तमोस्ति तस्योपरींदुः प्रचरेत्सचार्द्ध ः ॥
सनाल कञ्जेन ग्रहीत एव वद प्रवीण प्रति रूप मस्य ॥३४॥

हे प्रवीण आप यह तो बताइये कि एक चन्द्रमा है उसके ऊपर अन्धकार है और उस अन्धकार के ऊपर फिर चन्द्रमा है वह आधा ही है उस चन्द्रमा को नाल के सहित कमल ने पकड़ रक्खा है इसका वास्तविक रूप आप बताइये ॥३४॥

वदामि कञ्जस्य दलानि पञ्च विभाति तारा अपि पञ्च तत्र ॥
किं मुक्त मे तद्भवतीभि रूनं किं नोप दृष्टं कमलायताक्ष्यः ॥३५॥

इसके उत्तर में श्रीरामजी बोले कि मैं कहता हूँ सुनिये उस नाल के सहित कमल के पांच दल हैं उन दलों में पांच तारा भी प्रकाश कर रहे हैं हे कमल सदृश नेत्र वालियों आप लोगों ने यह छोटा सा क्या प्रश्न किया स्वयं क्यों उस कमल नेत्र वाले चन्द्रमा कोनहीं देख लिया ॥३५॥

ज्ञातं प्रवीणोसि नरेन्द्रसूनो त्वयोद्वहन्त्यो नृपजा सुधन्याः ॥
विलोकयन्त्योपि वयं च धन्या गुणेन रूपेण यतोविभासि ॥३६॥

उन स्त्रियों ने कहा हे नरेन्द्रकुमार हमने समझ लिया आप बहुत चतुर हैं अतः आपके साथ विवाह होने से ये राजकुमारियां अत्यन्त धन्य है और आपके दर्शन करती हुई हम लोग भी धन्य हैं जो कि आप अपने दिव्य गुण और रूप से हम लोगों के सामने प्रकाशमान हो रहे हैं ॥३६॥

इत्थं हास्य विलासैश्च पौरानार्य्यः समन्ततः ॥
नीराज्य भावतो रामं स्वात्मनो मन्दिरं गताः ॥३७॥

इस प्रकार हास्य और विलासों के द्वारा श्रीरामजी को घेरी हुई उन नागरिक स्त्रियों ने बड़े भाव से आरती स्वागत करके अपने २ मन्दिरों को चली गई ॥३७॥

राजापि चन्द्रमौले यो रामे संपाद्य ताः सुताः ॥
प्रत्यक्षांश्च दक्षिणाभिः कारया मास भोजनम् ॥३८॥

इसके बाद महाराज श्री चन्द्रमौली जी ने भी अपनी कन्याओं को श्रीराम के लिये अर्पण करके दक्षिणा सहित सब बरातियों को भोजन कराया ॥३८॥

वधूभिर्वर मादाय श्रीरामं सुमनोहरम् ॥
गान वाद्यै महोत्साहै र्जगाम् कौशलेश्वरः ॥३९॥

इसके बाद महाराज कौशलेश जी भी वधुओं के सहित मनोहर श्रीराम जी को लेकर गान वाद्य महान उत्सव पूर्वक जनवासे के लिये चल पड़े ॥३९॥

अमात्योऽवन्ति केशस्य नाम्ना सुरप्रभो महान् ॥
तेन तस्योत्तर दिने कन्याः सप्त मनोहराः ॥४०॥

दूसरे दिन अविन्तकापुरीके राजमन्त्री श्रीसुरप्रभ ने मनोहर अपनी सात कन्याओंका भी ॥४०

सुदायैः सर्व विधिना गान वाद्य महोत्सवैः ॥
दत्ताः श्रीरामचन्द्राय रूप, राशि सुखात्मने ॥४१॥

गान वाद्य महान उत्सव पूर्वक सब विधियों से रूप रासि सुखमय आत्मा सुन्दर दामाद श्री राम जी के लिए दिया ॥४१॥

तस्य चैवोत्तर दिने कौशलेशस्य सन्निधौ ॥
आस मुद्राक्षितीशानां शभा चाभूत्महत्तरः ॥४२॥

फिर उसके दूसरे दिन सम्पूर्ण पृथ्वी के राजा लोग महाराज श्रीकौसलेश जीके समीप में आये बहुत बड़ी सभा हुई ॥४२॥

उपायनै र्रत्न, माल्यै र्मिमिलुस्ते नराधिपाः ॥
सार्वभौमं कौशलेशं सम्बन्धेपि स्पृहावतः ॥४३॥

अनेक प्रकार को रत्न माल्यादिक उपायन भेंट देकर सार्वभौम कौसलेश जी से अपनी कन्यावों को देकर सम्बन्ध करने की इच्छा से मिले ॥४३॥

तत्र चैको महाराजो मैवार देश पलकः ॥
वध्वांजलिं सम्बभाषे श्रीमद्दशरथं प्रभुं ॥४४॥

उन सब राजाओंमें से मेवाड़ देशपती राजा हाथ जोड़कर महाराज श्री चक्रवर्ती दशरथ जी से बोले कि ॥४४॥

नशक्ताः किल राजेन्द्र त्वां निमंत्रयितुं वयम् ॥
तथापि विलशत्येव भूपानां हृदये परम् ॥४५॥

हे राज राजेन्द्र हम लोगों में आपको निमन्त्रण देनेकी शक्ति नहीं होने पर भी हम सब राजाओं के मन में आपको निमन्त्रण देने की परम अभिलाषा हो रही है ॥४५॥

अभिलाषो नु षङ्गेन सर्वेषां तद्धि स्वीकुरु ॥
पश्चात्याना मासमुद्रात्समुद्रं दृष्टु मिच्छया ॥४६॥

यह हम लोगों की अभिलाषा आनुसंगिक हैं अतः आप स्वीकार करें इस प्रकार उन पश्चिम देश के राजाओं की प्रार्थना को सुनकर तथा पच्छिम समुद्र को देखने की इच्छा से ॥४६॥

कथं न स्वीकरोम्ये तद्भवतां च हितैषिणाम् ॥
इत्युक्त्वा कौशलेन्द्रेण तेभ्यो हर्ष प्रयोजितः ॥४७॥

आप लोग मेरे हितैषी हैं क्यों नहीं आप लोगों की प्रार्थना स्वीकार करूंगा ऐसा कहक राज कौसलेश जी ने उन सब राजाओं को अत्यन्त हर्षित किया ॥४७॥

एवं ते कौशलेन्द्रस्य वचः श्रुत्वा मनोगमम् ॥
पुरोधाभिस्तु रामस्य विशाले कुंकुमेन वै ॥४८॥

उन सब राजाओं ने भी इस प्रकार मन रमणीय महाराज कौसलेश जी के बचन सुनकर अपने अपने उपरोहितों के द्वारा कुमकुम से श्रीराम जी के विशाल ॥४८॥

सुभाले साक्षते नैव पत्रं परम शोभनम् ॥
राजानः कारयामासुः कन्यानां दान हेतवे ॥४९॥

सुन्दर मस्तक में परम सोभायमान तिलक तथा उसी कुमकुम से कपोल पत्र बनाये इस प्रकार राजाओं ने अपनी कन्याओं के पाणिग्रहण हेतु यह विधि करके ॥४९॥

इत्थं मनोभिलाषं ते संप्राप्य क्षितिपा यथा ॥
स्वां स्वां पुरीं गताः सर्वे शीघ्र मुत्साह हेतवे ॥५०॥

इस प्रकार अपनी अभिलाषाओं को पूर्ण प्राप्त करके अपने २ नगरों को गये बड़ी शीघ्रता से विवाह का उत्साह इन्तजाम किये ॥५०॥

पश्चाच्छ्री कौशले शोपि क्रमेण नृप कन्यया ॥
गत्वा तूद्वाह्य श्रीरामं तद्देशाच्चन्यवर्त्तयत् ॥५१॥

पीछे से महाराज कौसलेश जी भी विवाह करके कन्या वर बरात को ले करके क्रमशः उन सब राजाओं के यहां गये राज कन्याओं से भी श्रीरामजी का विवाह करके उन सब देशों से निवृत्त होकर श्री अयोध्या जी में आये ॥५१॥

रहस्य स्थान समयैः स साहित्य समाजकैः ॥
वरेच्छुका राजपुत्री वोधिता योग मुद्रया ॥५२॥

श्रीसीताराम जी का गुप्त चरित्र रहस्य और रास रंग उत्सव के स्थान तथा समय सजावट समाज सब विषय को श्री योगमुद्रा ने विवाह की इच्छा वाली उन राजपुत्री श्रीसुकान्ती जी को सब समझाया ॥५२॥

राम रत्न विशेषाच्च तस्या उक्ति हरेण वै ॥
संज्ञापितापि मञ्जूषे त्येवं लोकेपि दर्शितम् ॥५३॥

श्रीसीताराम रहस्य चरित्ररूपी महान् रत्न की विशेषता युक्त श्री योगमुद्रा के युक्तीयुक्त वाणी द्वारा प्रगट होने से ही इस ग्रन्थ का नाम भा श्री सीताराम रत्नमञ्जूषा रक्खा गया है इसी नाम से यह ग्रन्थ लोक में प्रकाशित हुआ ॥५३॥

कदाचि याज्ञवल्क्येन कृतं संशय मानसः ॥
शिव शिष्येणात्म शिष्य स्तस्योक्त्या हि समाहितः॥५४॥

इ॰ कभी किसी समय श्रीशंकर जी के चेला श्री याज्ञवल्क्य जी ने अपने चेला श्रीभरद्वाज जी को महान उत्[illegible] विषयक शंसय युक्त प्रश्न के उत्तरमें निश्चय रूप से समझाया था ॥५४॥

देवतानां समाजे हि कथिता शंकरेण सा ॥
रामायण त्वमित्याख्य मेवं लोके प्रकाशितम् ॥५५॥

तथा फिर कभी श्रीशङ्कर जी ने देवलोक में देवताओं की सभा में भी इस चरित्र को कह कर इस चरित्र का नाम अमर रामायण तुम है ऐसा कहा था। इस प्रकार यह लोकमें प्रकाशित हुआ ॥५५॥

इति श्रीशङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां श्रीरामस्य गौणोपयम वर्णनो नाम त्रिषष्टितमः सर्गः ॥६३॥

इति श्रीजानकीशरणेन वृत्तिस्थेन मधुकर मधुकर रूप रसा स्वादिना कृता टीकायां श्रीरामस्य गौणोपयम वर्णनो नाम त्रिषष्टितमः सर्गः ॥६३॥

धन्यभाग रसिकन चरित, भाव भावना रंग ।
लिखने को बड़भाग सों, मिल्यो सहज सतसंग ॥१॥
अमर कथा यह अमर कर, अमृत राम चरित्र ।
सन्त पूर्वजों का पिया, पीवत होत पवित्र ॥२॥
रमत सबन में राम जी, तौ भी धरि मर्याद ।
ब्याह रीति सब लोक में, धर्म सहज अह्लाद ॥३॥
सृष्टि सुधारी नीति सों, निज अंशन सुखदानि ।
रीति चलाई आप चलि, ग्रन्थ रचाये जानि ॥४॥
धर्म नीति मर्य्याद करि, लीला करैं स्वतन्त्र ।
जीव आपका अंश है, माया भ्रमि परतन्त्र ॥५॥
जैसी जिसकी भावना, तैसी दिष्टी लीक ।
यह विचारि जो भक्त है, अर्थ लगावै टीक ॥६॥
सतरज तमके भेद सों, बुद्धि भेद बहु होत ।
भक्ति सात्विकी पाय जो, समझत रसिकन सोत ॥७॥
रसिकाई सियराम के, नाम रूप सुखधाम ।
भाव भीतरी रंग में, रमते राम गुलाम ॥८॥

❀ समाप्त ❀

शुद्धाशुद्ध पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१०	विदाम्बर:	विदाम्वर
२	५	ह्मब्रलोक	ब्रह्म लोक
२	७	तत्त्	तत्त्
२	८	स्वैवै	ष्वैवै
३	४	संस्कारा:	संस्कारा
३	६	प्राणवल्लभे:	प्राणवल्लभे
३	७	क्रियामान्	क्रियावान
३	७	सन्तुष्ट:	सन्तुष्ट
६	३	षोडसै:	षोडशै:
६	६	कृत्वां	कृत्वा
६	१३	युग्मश्चैतन्	युग्मञ्चैतन्
७	४	तत्रश्चाशने	तत्र चासने
७	५	धनुष् तथा	धनुल् तथा
८	१	हरहर्स्योमहा	हरहर्य्योमहा
८	१०	दत्त	दत्ते
८	११	धूप	धूपं
८	१५	सयुक्ता	संयुक्ता
८	१८	नियन्त्रिता	निमन्त्रिता
९	४	प्रत्यूवाच	प्रत्युवाच
९	६	स्वागता:	स्वागता
१०	३	आस्यनेवा	आस्यमेवा
१०	४	र्निदिश	र्निर्दिश
१०	७	नागा:	नाग:
११	४	ग्रम	ग्राम
११	८	प्रभशति	प्रभवति
१२	६	समूवाच	समुवाच
१२	७	चैकदशो	चैकादशो
१३	१	समाविसत्	समाविशन्
१३	४	र्भावि	र्भाव
१३	९	ध्याया: मत्त्यत्तै	ध्याया मत्यन्तै
१४	१०	जानासिति	जानासीति
१५	१४	राज्ये	राज्यं
१६	६	प्रभावे	प्रभावो
१७	५	नारायणणो	नारायणो
१७	७	लक्ष्मी	लक्ष्मी:
२१	१	हस्तेऽनस्त्रं	हस्तेऽजस्त्रं
२१	९	त्विष्णु	न्विष्णु
२४	११	जाष्तु	जायास्तु
२४	११	संष्कार	संस्कार
२४	१४	गृणभिद्भ:	गृणर्द्धि:
२५	४	पाञ्जलिना	प्राञ्जलिना
२७	३	श्रीजित	श्रीर्जित
२७	४	वपु	वपु:
३०	१०	प्रवचामि	प्रवक्ष्यामि
३०	१०	ह्यास्माद्धि	ह्यस्माद्धि
३५	२	भावकरणम्	भावकारणम्
३५	१०	मुमुक्षु	मुमुक्षु:
३९	३	नत्यं	नृत्यं
४७	९	चतुर्दिक्षुं	चतुर्दिक्षु
६१	१४	तत्तासा	दत्ता सा
६१	१६	तश्मैश्सर्वं	तस्मैसर्वं
६४	१५	शोडशै:	षोडशै:
६८	१३	वास्त्रा:	वस्त्रा:
७९	१३	चतश्रोपि	चतस्रोऽपि
९५	१४	पुण्या सर्वा	पुण्या: सर्वा:
१०४	८	सृणु	शृणु
१०९	७	चतश्रोपि	चतस्रोपि
१११	५	सस्त्रकै:	सहस्त्रकै:
११३	११	शितु न्वितं	शितु रन्वितं
११५	६	शन्तिक:	शान्तिक:
११६	१०	दानिं	दानीं
११६	१०	वणयाम्यहम्	वर्णयाम्यहम्
११९	१०	र्निमिवन्यो	निमि वंश्यो
१२१	५	अश्ति	अस्ति
१२२	८	तश्य	तस्य
१२२	१६	वायोश्ति	कायोस्ति

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२५	६	श्नान	स्नान
१२८	३	श्नान	स्नान
१३१	१०	खंख्यया	संख्यया
१३२	४	सयुता	संयुता
१३३	१०	वर्ता	वार्ता
१४०	३	मशुकाम्वा	मशुकाम्वा
१५०	५	ताषां	तासां
१५५	६	सत्रुघ्नो	शत्रुघ्नो
१६०	१०	यज्ञवल्क	याज्ञवल्क
१६३	१५	पाताका	पताका
१६४	४	श्चत्र	श्छत्र
१६६	२	जन्त्रिका	यन्त्रिका
१७०	३	सत्रुघ्नस्य	शत्रुघ्नस्य
१७०	४	तास्मिन्	तस्मिम्
१७०	६	पादपै	पादपैः
१७७	४	सवासां	सर्वासां
१७८	२	लसन्चि	लसन्ति
१८३	१४	स्तृतिये	स्तृतीये
१९२	६	शृणिवदानि	सृणिवदानीं
१९३	२	प्रसादत्ताः	प्रसादतः
१९३	४	ताषां	तासां
२०१	५	गणै	गणैः
२०३	१५	पुष्कला	पुष्कला
२०८	१४	भिक्ति	भित्ति
२१२	१३	षरिष्कृते	परिष्कृते
२१५	६	मनोहम्	मनोहरम
२२२	१०	तद्भतम्	तद्भूतम
२२५	५	शात्जौ	शात्मजौ
२२७	३	चन्द्रला	चन्द्रकला
२२८	२	सूत्राञ्ति	सूत्राञ्चित
२३०	४	चातुर्य्यध।वं	चातुर्य्यभावं
२३१	३	कन्यायातु	कन्ययातु
२३३	८	न्यादाय	ण्यादाय
२३३	१०	रस	रसै

पृष्ठ	पंक्ति	शुद्ध	अशुद्ध
२३४	१२	सौगम्धि	सौगन्धि
२३४	१३	सुगम्धैश्च	सुगन्धैश्च
२३६	३	मागिकाभिः	मारिकाभिः
२३६	१०	दशयित्या	दर्शयित्वा
२३६	१३	त[illegible]का	तदैका
२३७	७	तदेकया	तदैकया
२३८	५	छायं	छाया
२३८	५	तदो रतलम्वै	तरोस्तलम्वै
२३८	५	मध्यन्ह के	मध्याह्न के
२३९	२	रघिवा	रधिवा
२३९	३	सुन्दरीणा	सुन्दरीणां
२४०	६	सरोजपणौ	सरोजपाणौ
२४०	६	सुपुष्पाञ्ति	सुपुष्पाञ्चित्
२४१	१	मभुराम्र	मधुराम्र
२४१	१४	रवास्तरगं	स्वास्तरणं
२४३	२	द्विस्त्रि	चतुस्त्रि
२५२	१३	नानाद	ननाद
२५४	२	जावक्याः	जानक्याः
२५७	१२	तवानूकूलं	तवानुकूलं
२५६	१	शंसिमुखी	शशिमुखी
२६०	१४	वदना विन्दम्	वदनारविन्दम
२६६	४	श्चुवना	श्चुम्वना
२७२	११	हंशाना	हंसानां
२७६	६	विनीताना	विनीतानां
२८२	७	चतुविधैः	चतुर्विधैः
२८६	१४	विधुत्पञ्च	विद्युत्पञ्ज
२८८	४	स्तञ्चित	सञ्चित
२८६	६	रघुनम्दनः	रघुनन्दनः
२९१	४	सखी नी	सखिभि र्नी
२९१	५	सखीभिः	सखिभिः
२९१	१२	कातुहला	कौतूहला
२९४	६	त्वपि	त्वयि
२९५	१	हर्म्यरथा	हर्म्यस्था
३०२	१	भूमो च	भूमौ च

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३०३	१३	लोके	लोके
३०७	६	पश्चातके	यज्ञातके
३०८	१	विशाम्पपे	विशाम्पते
३१५	८	मिन्नां	भिन्नां
३१८	१	त्वद्रक्ति	त्वद्भक्ति
३१८	१२	दीपापत्ति	दोषापत्ति
३२०	४	भगाब्धौ	भवाब्धौ
३२१	७	त्व	त्वं
३२५	१४	अस्या	अस्याः
३३०	१४	वंर्ता	वांर्ता
३३२	१६	नुमुक्षवः	मुमुक्षवः
३३४	११	तिश्रः	तिस्रः
३३४	१२	जन्मातरै	जन्मान्तरै
३३४	१६	राजेम्द्र	राजेन्द्र
३३५	१	श्रीरामो	श्रीरामः
३३६	१	स्वात्मान	स्वात्मानं
३३७	११	तावत्तंञ्च	तावत्तञ्च
३४२	८	श्चक्रवर्त्ति	श्चक्रवर्ति
३४२	१५	नरेश्चर	नरेश्वर
३४४	६	राम	रामो
३४५	५	तस्मित्लग्ने	तस्मिल्लग्ने
३४६	१	विलेपने:	विलेपनैः
३४६	४	मूर्त्ति	मूर्ति
३५०	११	समाहितः	समाहिताः
३५०	१४	समर्पितः	समर्पितः
३५१	२	पञ्चराशत	पञ्चाशत्
३५१	५	राम	रामः
३५६	२	नीराजानम्	नीराजनम
३५६	२	कार्यामात्र	कार्यमात्र
३६०	६	पक्षिण	पक्षिणो
३६१	७	परै	परैः
३६४	१३	कुब्छु	कुब्ज
३६५	१	पनानि	यानानि
३६७	२	कैचित्तु	केचित्तु
३६७	७	पुन्डाश्च	पुन्ड्राश्च

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३६७	८	हरिस्पुड्रा	[illegible]
३६८	६	कुश्मीर	[illegible]
३६८	६	मनोहरा	मनोहर
३७०	१४	तनुवाच	तमुवाच
३७१	१५	वेवता	देवता
३७२	८	रचिततैः	रचितैः
३७३	७	मागम्य	मागत्य
३७५	४	प'दाङ्ग	पादांग
३७५	६	कोटिप्रमे	कोटिप्रभे
३७५	६	श्रंगार	शृँगार
३७५	१२	गंजारूटे	गंजारूढ़े
३७६	१	महाशब्दैः	महच्छब्दैः
३७९	७	यर्वतान्	पर्वतान्
३८४	४	व्रतिनः	व्रतिनः
३८५	७	पौत्र	पौत्र
३८६	१०	यवस्यान	वयस्यान
३८९	६	प्रशंसतु	प्रशंसतुः
३९३	६	गुरुभवान्	गुरुर्भवान
३९३	१२	लम्पते	लभ्यते
३९५	१०	राजानूनां	राजतूनां
३९६	६	चिक्यो	धिक्यो
३९७	२	सैम्यं	सौम्य
३९७	४	धैर्य्यधिकं	धैर्याधिकं
३९७	१०	मदर्वा	मार्दवा
३९८	८	लज्यया	लज्जया
३९८	८	लज्या	लज्जा
३९९	२	पुमाम	पुमान्
३९९	८	गण्याकृतं	गण्यां कृतु
४००	१५	नराधियः	नराधिपः
४०२	१	शृवन्ति	शृण्वन्ति
४०२	६	ग्रअसग्र	अग्र सग्र
३०४	८	चक्षुो	चक्षुीः
४०५	६	कस्थंः	कस्थः
४०६	२	कारणां	का नाम
४०६	५	शृन्वति	शृण्वन्ति

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
	९	तथैवः	तथैव
	१२	श्चेव	श्चैव
४०७	१४	सर्वे:	सर्वैः
४०८	४	तिष्ठन्ति	तिष्ठन्ति
४०९	८	सुरपतिः	सुरपतिः
४११	१	वपुः	वपु
४१३	३	नृष	नृप
४१३	१०	गुरुषदिष्टः	गुरूपदिष्टः
४१३	१४	जनानषि	जनानपि
४१५	१०	शङ्का	शाङ्का
४१५	१४	मुगिं	मुनिं
४२०	२	छान्दादय	छन्दादय
४२०	५	पुसो	पुंसो
४२२	५	अतर्क	अतर्क
४२४	६	हर्ह ययौ	हर्ष ययौ
४२४	१५	वद्या	विद्या
४२६	३	प्रभ	प्रभो
४२६	१०	परञ्च च	प्ररञ्च
४२६	१२	तर्क	तर्क
४२७	१६	माणिभिः	मणिभिः
४२८	१०	रञ्जितम्	रञ्जितम्
४३०	१	महात्मात्य	महामात्य
४३०	२	भाराड	भाण्ड
४३०	७	सन्मुखं	सन्मुखं
४३१	६	उद्धैक	उर्ध्वैक
४३८	६	सर्वै	सर्वैः
४३८	१५	पाद्यानां	वाद्यानां
४३९	२	क्षितिजैः	क्षितिजै
४३९	८	नत्यंत्यो	नृत्यन्त्यो
४४२	१२	शिषरं	शिखरं
४४४	७	हेम्मस्तु	हेमस्तु
४४५	१	कञ्जापत	कञ्जायत
४४५	१०	ददार्शा	ददर्शा
४४५	११	वासः	वाससः
४४५	१४	चचाल सः	चचाल स
४४६	१	पदाञ्जयो	पदाञ्जयोः
४४६	२	विवेश	विवेश
४४६	७	सर्वदा	सर्वदा
४४७	२	महेश्वरः	महेश्वरः
४४७	१२	नीतिं	नीतं
४४९	११	कांश्प	कांश्य
४४९	१३	घण्टीच्च	घण्टो च्च
४५०	६	काञ्जायत	कञ्जायत
४५१	५	कन्दर्प्य	कन्दर्प
४५१	१०	लद्	लसद्
४५१	१४	काञ्चे	काञ्चने
४५२	१	पाश्यो	पार्श्यौ
४५२	६	प्रवीणः	प्रवीणाः
४५२	८	निपुणः	निपुणाः
४५४	३	सर्वथ	सर्वथा
४५५	८	भास	मास
४५७	१	जीराजनं	नीराजनं
४५७	४	वहुल	वहुलं
४५७	८	समांपं	समीपं
४५७	८	निर्णयो	निर्णयो
४५८	७	पत्राणां	पात्राणां
४५८	८	चित्रता	चित्रिता
४५८	११	पक्षिणापि	पक्षिणोपि
४५८	१३	मूपा	भूषा
४५९	८	दीपायने	दीपायनै
४५९	१३	सौवण	सौवर्ण
४६०	१६	सन्देह	सन्देहं
४६१	६	धर्म्म	धर्म्मं
४६१	१०	ग्घु	रघु
४६२	१०	५६	५७
४६३	९	विचक्षणे	वीक्षणे
४६३	१३	किंचित्	किंचित
४६४	६	मग्रतः	मागतः
४६५	८	नार्य्याः	यार्य्यः
४६५	६	युत	युतं
४६६	३	वृहद्दर्षावरे	वृहद्धर्म्म वरे

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४६९	१०	५६	५८
४७१	१०	शुभगे	शुभगै
४७१	१२	नेत्र	नैत्र
४७१	१४	मूषा	मूषा
४७१	१५	पक्ति	पंक्ति
४७१	१६	सन्द	मन्द
४७२	५	दौ	द्वौ
४७२	१३	वन्द	वद
४७३	४	थाहित	तथा हि
४७३	६	शांशिते	शंशिते
४७४	२	यथैच्छत	यथैच्छत
४७४	६	विहरन्नय	विहरञ्जय
४७४	७	न्सुवारिण	न्सुवारिणि
४७५	६	निदाघ	निदाघे
४७४	१०	आर्द्रां	आर्द्रां
४७५	१२	वर्पत्यापि	वर्षत्यपि
४७६	३	श्रावयें	श्रावये
४७६	८	परित	परितः
४७६	१०	वहु	वहुः
४७६	१०	रत्नै	रत्नैः
४७६	१२	प्युदग्र	प्युदग्र
४७७	१	पत्यलम	यत्यलम
४७७	६	वद्धतां	वद्धन्तां
४७७	११	चूर्णा ग	चूर्णाकणं
४७७	१४	साश्रयम	माश्रयन
४७८	१	विशेष	विशेषं
४७८	४	निसर्ग	निस्सर्ग
४७८	८	निधायात	निधायाथ
४७८	८	केल्य	केल्ये
४७९	१०	दासीभी	दासीभिः
४७८	८	केवल्य	केवल्ये
४७९	१४	पूर्ण	पूर्णा
४८०	१	वत्तये	प्रवर्तये
[illegible]८०	११	सर्वतो	सर्वतो
[illegible]	१	श्रष्ट	श्रेष्ठ

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४८१	७	नत्युन्तरं	[illegible]
४८१	८	समीपे	[illegible]
४८३	८	विद्वग्दि:	विद्वद्भि
४८३	८	मुख्ये:	मुख्यैः
४८३	९	लंघयत:	लंघयन्तः
४८३	१०	वत्युरम्	वत्परम्
४८३	१३	सूययो:	सूर्ययोः
४८५	८	जने:	जनैः
४८७	१४	प्रशंसने	प्रशंसनैः
४८८	१३	सुहादत्त:	सुहार्दतः
४९०	३	कार्य्यभि:	कार्य्यिभिः
४९०	६	श्रीराभ	श्रीराम
४९१	१०	५९	६०
४९३	२	स्वमर्प	समर्प
४९३	७	न्तूसलञ्जय:	न्तु सलञ्जयः
४९३	९	परि	परि
४९३	९	वर्णौ:	वर्णैः
४९४	२	मुच्चकै:	मुच्चकैः
४९४	३	विनयै	विनयैः
४९४	३	सुवर्णौ	सुवर्णै
४९४	१२	दिवस्पते	दिवस्पतेः
४९५	७	नृपाधि	नृपाधि
४९५	१०	नोलस्थलेभ	नीचस्थलेम्भ
४९५	१४	प्रत चान	प्रतीचान
४९६	१	विशिष्ठा	वशिष्ठा
४९६	६	महाह	महार्ह
४९६	११	तर्प्पणौ	तर्प्पणैः
४९७	१	सम्वात्रिन्ध	सम्वान्धि
४९७	८	दशनं	दर्शनं
४९७	१६	श्रत्वा	श्रुत्वा
४९८	२	नियाय	निनाय
४९८	६	संकाश्यं	सकांश्य
४९९	१	सुयोपि	सुयोपिद्
४९९	७	पौर	पीर
५०१	२	दीर्घ	दीर्घ

		अशुद्ध	शुद्ध
	४	कूर्म्निका	कूर्म्मिका
१	१०	वहिंप्र	वहि र्प्र
५०१	१२	जनं	गर्जं
५०१	१३	दापानां	दीपानां
५०१	१३	च्चपित	च्चर्पित
५०२	२	तव्क	तर्क
५०२	६	मङ्गलांगै	मंगलांगैः
५०२	६	कुम्भे	कुम्भैः
५०२	१०	उच्चैः	उच्चै
५०२	११	चनैश्च	जनैश्च
५०३	४	नाम	नामैक
५०३	६	सैन्यै	सैन्यैः
५०३	८	यान	यानै
५०३	६	वोहिते	वोहितैः
५०४	२	च्छुतं	च्छूतं
५०४	११	भुजम्यां	भुजाभ्याम्
५०५	३	द्रुभाणां	द्रुमाणां
५०५	५	पर्य्यंक	पर्य्यंक
५०५	६	सन्पुटेन	सम्पुटेन
५०५	१०	मात्र	मात्रं
५०६	५	दशनम्	दशनम्
५०७	१०	प्राप्त	प्राप्तं
५०८	७	गोपंगृहै	गोपगृहे
५०६	८	स्त्रो	स्त्री

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५०६	११	पूव	पूर्व
५०६	१३	निवेदयम्	निवेदयन्
५१०	१३	महाम्	महान्
५१२	८	तत्रव	तत्रैव
५१२	१०	सैन्यके	सैन्यकैः
५१२	१४	विगतां	विगता
५१३	३	मध्यमै	मध्यमैः
५१४	६	गन्धवस्य	गन्धर्वस्य
५१५	१	निर्दिस्य	निर्दिस्य
५१७	१०	प्रांप्य	प्राप्य
५१६	१३	यद्वे	यद्वै
५२०	१	तार्के	तार्कें
५२०	२	प्रदीप्तौ	प्रदीप्तौ
५२०	१४	वाज्य	वार्ज्य
५२१	१६	जगाम	जगाम
५२२	६	पलकः	पालकः
५२२	१०	जलि	जलि
५२३	३	पत्र	पत्रं
५२३	११	विशेषात्त	विशेषात्त
५२४	५	बृत्तिस्थेन मधुकर,	मधुकर बृत्तिस्थेन

अशुद्धियों की भरमार होने पर भी कुछ २ शोधा गया है। दुर्लभ वस्तु सुलभ तो हुई। अतः सन्तजन क्षमा करके सोध लवें॥